।।श्री वीत रागाय नमः।।

स्वाध्याय प्रवेशिका
(ज्ञातव्य विषयों का संग्रह)

श्रावक के दैनिक ६ कृत्य हैं— १. देव पूजा, २. गुरु सेवा, ३. स्वाध्याय, ४. संयम, ५. तप और ६. दान। इनमें तीसरे स्थान पर स्वाध्याय है। स्वाध्याय अन्तरंग तप है इससे आत्मा का विकाश होता है। और आत्मा में अलौकिक ज्ञान की वृद्धि होती है। स्वाध्याय दीपक है जिससे लौकिक दोनों जगत् के पदार्थ दिखाई देते हैं। स्वाध्याय की महिमा अचिंत्य है। स्वाध्याय से ही आत्म कल्याण और परोपकार की भावना मनुष्य के हृदय में जागृत होती है। स्वाध्याय की प्रवृत्ति से ही जैन समाज में तत्त्वज्ञान की रुचि रही है। कुछ समय से स्वाध्याय प्रचार की ओर से समाज का ध्यान हट गया इसलिए धार्मिक ज्ञान की कमी भी दिखाई देने लगी अब फिर सर्वत्र जागृति के कारण स्वाध्याय शालाओं की सीापना की जा रही है यह शुभ चिह्न है दिल्ली के कई प्रमुख स्थानों पर स्वाध्यायशालाओं की स्थापना की जा चुकी है इससे बड़ा लाभ हुआ सैकड़ों बालकों, युवकों और स्त्रियों ने स्वाध्याय प्रमियों में से एक भाई ने एक संग्रह ग्रन्थ तैयार कराया यह ग्रन्थ स्वाध्याय करने वालों के लिए अतीव उपयोगी है। यद्यपि इसमें किसी प्रकार का क्रम नहीं है; परन्तु उन सब बातों का संग्रह किया गया है जिनके जाने बिना स्वाध्याय में प्रवृत्ति नहीं हो सकती। यह प्रयास स्तुत्य है; ग्रन्थों को विचार पूर्वक अध्ययन किया जाय तो थोड़े ही समय में अधिक ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। पहले इसी प्रकार के विद्वान् पण्डित जैनधर्म प्रचार के मुख्य स्तम्भ समझे जाते थे और उनके द्वारा समाज में सदाचार की विशेष प्रवृत्ति जागृत होती इस ग्रन्थ में निम्न बातों का संग्रह किया गया है—

गुणस्थानों की चर्चा, मार्गणा, जीवसमास, आस्रवभेद, धर्म का स्वरूप, गुणश्रेणी, निर्जरा, रत्नत्रय, प्रमाण, नयभेद, निक्षेप, स्याद्वाद योनि कुलकोड़ी चौबीस तीर्थंकरों के पंच, कल्याक उनके सम्बन्ध में विशेष ज्ञातव्य बातें द्वदशांग वाणी का निरूपण, चौदह पूर्व द्वीप का वर्णन मोक्ष प्राप्ति का उपाय जीवों की आुय, अकृत्रिम चैत्यालयों की संख्या, श्रावक की ५३ क्रियायें, ५३ भाव, १७ नियम, श्रावक के २१ गुण दातार के २१ गुण पंचलब्धि बारह मासा वजदन्त चक्रवर्ती भक्तामर स्तोत्र सार्थ, तत्त्वार्थ सूत्र का संक्षिप्त विवरण श्री वर्णी जी के पत्र पं. दीपचन्द जी के लिए अठाई रासा और प्रार्थना।

यह संग्रह विशेष परिश्रम पूर्वक तैयार किया गया है इसलिए संग्रहकार धन्यवाद के योग्य हैं। यदि उनके परिश्रम से पाठकों को लाभ हो गया तो उनका परिश्रम सफल होगा।

इस ग्रन्थ का प्रकाशन श्रीमती धर्मपत्नी सेठ शम्भूनाथ जी कागजी के द्रव्य से हुआ है। एतदर्थ आपको विशेष धन्यवाद है जिनके प्रयत्न से ऐसा उपयोगी संग्रह समाज के सामने प्रस्तुत किया गया हे।

आशा है स्वाध्याय प्रेमी इस संग्रह ग्रन्थ से अधिक लाभ उठावेंगे और सर्वत्र स्वाध्याय की प्रवृति बढ़ावेंगे और सदैव इसप्रकार की भावना अपने हृदय में रक्खेंगे।

जिनवाणी सुधा सम जानिकैं, नित पीजो धी धारी
१—७—५० सेठ का कूँचा दिल्ली।

सुमेरचन्द्र जैन न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न शास्त्री,

कर्म बंध की प्रतिकृतियाँ गुणस्थानों पर किस भाँति हैं बताओ

प्रश्न नम्बर १ उत्तर

संसारी जीव अष्ट कर्मणि कर बंधे हैं। सो जीव राशि दो प्रकार है। एक संसारिक एक मुक्त जीव। जिनमें संसारी के दो भेद हैं। पहिला भव्य दूसरा अभव्य जहाँ अभव्य राशि और भव्य राशि से अन्तानन्त गुणी जीव और दूर भव्य और अभव्य समान कबहूँ सर्व मोक्ष योग नाहीं तथा और भी केते मिथ्या दृष्टि जीव मोह राग के चोर सो कर्म संकलन तै बंधे हैं। मोह नृप के वंदीखाने में पड़े हैं सो मिथ्यात योग बंधानतैं कबहूँ नहीं छुटें ऐसे अनादि मिथ्यातधारी जीव अनन्त है। और इनमें कोई जीव मोक्ष जाने योग्य है। ते कारण पाय मोक्ष होंय सो एतो संसारी राशि कही और निकट भव्य अब जीव जो सासादन दूसरे गुणस्थान तै लगाय अयोगी गुण स्थान पर्यन्त हैं। सो यह मोक्ष जीव हैं। ए सर्व मोक्ष जाने योग्य हैं। इनमें यथा योग्य कर्मन का सम्बन्ध है। कोई कर्म बंध करने योग्य हैं। इन जीवन पै द्रव्य कर्म का बंधपाइये हैं। सर्व अष्ट कर्म की प्रकृति १४८ है गुणस तिनमें बंधने योग्य १२० हैं। वाकी २८ इनकी इन्ही में गर्भित करी है वरण चतुष्क की बीस थी सो चार ही मूल राखी, उत्तर भेद तिनके १६ सो तीन चार में ही गर्भित किये और पंच बंधान और पंच संघात ये दस प्रकृति पंच शरीरन में मिला दई दशन मोह के तीन भेद थे सो दो भेद एक मिथ्यात में मिलाये ऐसे वरण की १६ और शरीर आदि की १० दशन मोह की २ यह सर्व अट्ठाइस एक सो बीस में गर्भित करी हैं और एक सौ बीस राखी सो वंथ योग प्रकृति नाना जीव अपेक्षा १२०। तिनको अब गुणस्थान प्रकृति हिये हैं। सो मिथ्यात गुणस्थान में अहारक द्विक दोय एक और तीर्थंकर यह तीन प्रकृति नहीं बंधे हैं। ऊपर से गुणस्थान मे यथा योग्य आय मिलेगी। मिथ्यात में ११७ प्रकृति नाना जीव अपेक्षा। बंध योग हैं और मिथ्यातत्व छुटि जब इस जीव उपरले गुणस्थान को प्राप्ति होय है। तिनके वंध कहिये। सो सासादन में ही लोह प्रकृति का वंध नांही। मिथ्यात्य ही में रहे हैं। तिनके नाम मिथ्यात्व, ''नपुन्सक वेद'', के नर्क कात्रिक ।।३।। स्फाटिक संहनन।।२।। और हन्डक सस्थान।।१।। और जाति।।४।। और सूक्ष्म।।१।। साधारण।।१।। अप्रयाप्ति।।१।। आताप।।१।। स्थावर।।१।। ए सोलह का बंध दूसरे सासादन गुण स्थान में नाहीं। तिन सासादन में १०१ का बंध है और तीसरे गुणस्थान में दूसरे सासादन से २५ की व्युच्छिति करी। तिनके नाम अनन्तानुबंधी।।४।। और मध्य के सहनन।।४।। सस्थान मध्य के।।४।। और निद्रा मोटी।।३।। और तिर्यञ्चत्रिक की।।३।। और दुर्भग की।।१।। दुश्वर।।१।। अनाक्षेय।।१।। स्त्रीवेद।।१।। नीचगोत्र।।१।। ऊद्यात नाम।।१।। अशुभ चाला।।१।। यह २५ तजि तीसरे गुणस्थान छिंहतर ले आया। यहादेव और मनुष्म आयु तीर्थंकर यह तीन यहाँ मिली तब सर्वमिलि सतेतरि।।७७।। का बंध चौथे गुणस्थान में है। तहाँ दस किव्युच्छति तिनके नाम। अप्रत्याखाना की।।४।। मनुष्य कात्रिक।।३।। औदारिक शरीर।।१।। औदारिक अंगोपांग।।१।। वज्रवृषभ नाराच सहनन।।१।। इन दस कि व्युच्छतिकरि सडसढ का वंधलेय पंचम गुणस्थान में आया तहाँ प्रत्याख्यान की चौकड़ी कीव्युच्छिति करि तिरेसठ लेय छठे

गुजस्थान में आया। यहाँ पर मत में तिरेसठ का बंध है। यहाँ षट् की व्युच्छिति। तिनके नाम अस्थिर[1]।१।। अशुभ।१।। असाता।१।। अयश।१।। अरति।१।। शोक ।१।। एषट् की व्युच्छिति करि सत्तावन लये सात में गुणस्थान गये तहाँ अहारक द्विक मिला तब उनसाठि (५९) का बंध अप्रमत में। तहाँ देवायु की व्युच्छति। अठावन लेय आठ में गुणस्थान आया। तहाँ छत्तीस प्रकृति की व्युच्छिति तहाँ सात भाग। सो प्रथम भाग में निद्रा।१।। प्रचला।१।। एदोय की व्युच्छिति। और चार भाग में व्युच्छिति नांही। और छट्ठे भाग में तीस की व्युच्छिति तहाँ अगरु लघु।१।। उच्छवास।१।। अपघात और परघात ए चारि अगरु लघु चतुष्क की हैं। और तिर्थंकर।१।। निर्माण।१।। प्रयाप्ति।१।। प्रत्येक ।१।। त्रस।१।। बादर।१।। सुश्वर।१।। शुभ।१।। स्थिर।१।। आदये।।२।। सुभग।।२।। वरण चतुष्क की चारि।।२।। पंचेन्द्रिय।।२।। समचतुर संस्थान।।२।। सुभग।।२।। वरण चतुष्क की चारि।।२।। पंचेन्द्रिय।।२।। समचतुर संस्थान संस्थान।।२।। शुभ चाल।।२।। देवगति।।२।। देवगत्यानुपूर्वी।।२।। वैक्रियक आंगेपांग।।२।। अहारक आंगोपांग।।२।। वैक्रियक शरीर।।२।। अहारक शरीर।१।। तजैस शरीर ।१।। कर्माण शरीर।।२।। ऐसे ये तीस प्रकृति की छट्ठे भाग में व्युच्छिति। अरु सात में भाग में हास्य, रति, भय, जुगप्सा, एचारि सर्व सात ही भाग की छत्तीस क अष्ट मं व्युच्छिति करि नव में गये तहाँ वाईस का बंध है इहाँ संज्वलन की चौकड़ी की चारि।।४।। पुरुषवेद।१।। इन पंचन की व्युच्छिति अनिवृत में करि सत्तरा प्रकृतिन का वंध लेकर दशमें आया तहाँ सोलह की व्यच्छिति ज्ञाना वरणी की पाँच।।५।। अन्तराय।।५।। दर्शनावर्ण वारि।।४।। उच्च गोत्र।१।। यशस्कीर्त।१।। इन सोलह की व्युच्छिती इसमें गुणस्थान में करि एक सातावेदनी रही सो ग्यार में वार में तेर में इन तीन गुणसथान में एक साता का वंध है तैरमें मैं चौदह में गये तव साता की व्युच्छिति, तैरह में मेंकरि चौदह में गुणस्थान गया। तहाँ वंध नांही। यह कर्म वंध सयोग गुणस्थानवर्ती भगवान् के कहा है। सों योगन के निमित्त पाय सातावेदनी का उपचार करि वंधा कह्या है। सो वंध स्थिति अनुभाग रहित है। परन्त नियित के सद्भाव होते प्रकृति प्रदेश वंध है। सो आत्मा को सुख दुख कारी नांही। सुख दुखदायक तो स्थिति अनुभाग है। सो मोह के अभावतैं कषायन का अभाव है। अरु कषायन के अभावतैं स्थिति अनुभाग वंध का अभाव है। तथापि यहाँ योगत्रिक है। त ते योगन के निमित तैं तेरहवैं गुणस्थान तांई कर्म का वंध कह्या है। और केतक अतत्व श्रद्धानी दीर्घ मोह के उदयतैं ऐसा माने है। जो हम सम्यक्तवंत है। सो हमारे कर्म वंध होता नांही— हम अवंध हैं। ऐसा उलटा श्रद्धानकरि कर्मवंध के मेटवेतैं निरुद्यमी होय, आपको अशुद्ध का शुद्ध मानि अनेक असंयम क्रिया करि, विषय कषायन रूप परणति करि, अपना पर भव विगाड़े हैं। ता को कहिए हैं। भो विषयन के लोभी, तू देखि कर्मन का बन्ध मुनीश्वरों तै लगाय केवली भगवान् तांई तथा योग्य गुणस्थान तांई पदस्थ प्रमाण समस्त संसारी जीवन की होय है। और जो कर्मराहत जीव हैं तिनके कर्म का बँध नांही होय है। ताते भो भव्यात्मा, तु स्वेच्छाचार परिणाम तजि कैं जिनदेव भाषित प्रमाण (श्रद्धान्) करि आपका अनादि सञ्ति कर्म बन्धरूप मल तैं शुद्ध होयवे का उपाय करि। ताते अतिन्द्रीय सुख का भोक्ता होय। ऐसे संयोग केवली गुणस्थान में एक साता वेदनी का बन्धुता की व्युच्छित करि अयोग केवली होय, अल्प काल रह के सिद्ध पद पावे हैं। ऐसा सामान्य बँध का स्वरूप कह्या। इति बंध प्रकरण समाप्तम्।।४।।

---

[1] यह दो का बंध भी नांही चौहतर का बंध तीजे गुणस्थान है। इहाँ व्युच्छिति नांही तौहतरलेय चौथे गुणस्थान आय तहाँ तहाँ देवाय मनुष्याय।

मार्गणं में जीव का क्या स्वरूप है। बताओ

प्रश्न नं. २ उत्तर।। गुणस्थानों पर मार्गणं दिखाया

मार्गण चौदह है— १. गति, २. इन्द्रीय, ३. काय, ४. योग, ५. वेद, ६. कषाय, ७. ज्ञान, ८. संयम, ९. दर्शन, १०. लेस्या, ११. भव्य, १२. सम्यक्त, १३. सैनी, १४. वोअहार, से चौदह मार्गण हैं। प्रथम ही गुणस्थान में मार्ग पा चौबीस ठाम (स्थान) लगाइये हैं। तहाँ चौथे गुणस्थान तांई तो गति चार ही है। और पंचम गुण स्थान में मनुष्य वा तिर्यग्गति है। और छट्ठे ते उपर ले गुण स्थान में एक मनुष्य गति ही जानना। और इन्द्रीय मार्गणा सो प्रथम गुणस्थान तो पंच ही इन्द्रीय धारक जीवन के होय है। और दूसरे से लगाये चौदवें गुण स्थान पर्यनत ए सर्व स्थान पचेन्द्रीय सैनी के होय है। और कोई एकेन्द्रीयादि असैनी पर्यन्त जीवन के सासादन कहें हैं। ता को मुख्यता नांही जानना यगि योग्य समझलेना। वहरि काय मार्गणा—सो प्रथम गुणस्थान तौ षटकाय जीवन के ही जानना । और दूसरे ते लगाय चौदवे नांई ए स्थान त्र सजीव काय के होय हैं। आगे योग मार्गणा। तहाँ प्रथम गुणस्थान में आहरक द्विक विना योग तेरा है और सासादन में भी एही तेरह योग है और मिश्र में मन के चारि वचन के चारि काय के दोय ऐसे दस योग है। और असंत चौथे में आहरक द्विक विना, तेरह योग है और पंच में नौव छटे में आहरक द्विक सहित ज्ञारह योग है और सातवे ते लगाय गारहवे पर्यन्त नव योग है। तेरवें में सात योग हैं चौदवें में योग नांही आगे वेद मार्गणां सो प्रथम ते लगाय नव में गुणस्थान के सवेद भाग पर्यन्त तीनों वेद है। आगे वेद नांही। आगे कषाय मार्गणा सो प्रथम तैं दूसरे तांई कषाय पच्चीस ही है। और तीसरे चौथे में कषाय इक्कीसही और पंचम में कषाय सतरा है। और छइेने अपूर्व करण पर्यन्त तेरह कषाय है। नवमें में सात हैं। दशमें में एक सूक्ष्म लोभ है आगे कषाय नांहि। ज्ञान मार्गणा। सो प्रथम दूसरे में तो तीन—कुज्ञान है और तीसरे में मिंश्र ज्ञान है। और चौथे पंचम में तीन सुज्ञान है और प्रमत तैं लगाय वारहवे पर्यन्त ज्ञान चारि है। तेरहवें चौदवें में एक केवल ज्ञान है। आगै संयम मार्गणा। आगे संयम कहिए है। सो मिथ्यात मैं असंयत पर्यन्त तो असंयम है और पंचम में देश संयम एक है और प्रमत अप्रमत इन दोउन में समायक, छेदो—पस्थापना, परिहार विशुद्ध, यह तीन संयम है। और आठवें नव में समायक छेदोपस्थापना, यह दोय संयम है। और दसमें में सूक्षम सांपराय संयम है और ऊपरे एक यथाख्यात ही संयमहे। आगे दर्शन मार्गणा। सो प्रथम तै तीजै पर्यन्त तो दोय दर्शन है। और चौथे तेलगाय लेस्या वारहवे पर्यन्त तीन दर्शन है। तेरहवे चौदवें में एक केवल दर्शन है आगे लेस्या मार्गणा सो चौथे गुणस्थान पर्यन्त तो षट लेस्या है और पंचम ते लगाय तेहरवें में गुण स्थान पर्यन्त एक शुकल लेश्या है और अक्षम लें लगाय तेहरवें में गुण स्थान पर्यन्त एक शुकल लेश्या है चौदवें में लेश्या नांही। आगे भव्य मार्गणा। तहाँ मोक्ष कबहु न जाय, सो अभव्य हैं। मोक्ष जाने योग्य होय ताको भव्य कहिए। सो प्रथम गुण स्थान में तो भव्य अभव्य होय हैं। और उपले—सर्व गुणस्थान भव्य को होय है। आगे सम्यक् मार्गणा सो मिथ्यात में मिथ्यात सम्क है। सासादन में सासादन सम्यक है। मिश्र में मिश्र है। और असंयत सें लगाय अप्रलत लौं उपशम, क्षयोपशम, और क्षायक सम्यक है। और आठ में ते लगाय ज्ञारह में लो उपशम और क्षायक दोय सम्यक है। और बारहवें में लेय सिद्धन पर्यन्त एक क्षायक सम्यक है। आगे संगी मार्गणां। सो प्रथम गुणस्थान में सैनी असैनी दोनों। दूसरे तै लगाय बारहवें तक सैनी ही हैं। तेरहवें चौदवें में दोऊ नांही। आगे अहार मार्गणा कहिए हैं। तहाँ प्रथम, दूसरे, चौथे, इनमें अहारक, अनहारक, दोऊ हैं और मिश्र तीजे में व पंच में एक

अहारक हैं और छटे में अहारक अनहारक दोऊ हैं। अप्रमत तें लगाय वारहवें पर्यन्त तो आहारक हैं तेरहमें दोऊ हैं चौदहवें में अनाहारक हैं। इति मार्गणी प्ररुपण

गुणस्थानों पर जीव समास हि किस भाँति है बताओ

प्रश्न नं. ३ उत्तर

आगे जीवसमास गुणस्थान पै लागाइये हैं। तहाँ प्रथम गुणस्थान में चौदह ही जीव समास है। और सासादन, असंयत, प्रमत, संयोग केवली, इन च्यारि गुणस्थानन में पंचेन्द्रीय की प्रयापित, अप्रयाप्ति, ए दोऊ ही जीवसमास हैं। और वाकी के सर्वगुणस्थानों में एक पंचकेन्द्रीय पर्याप्तिजीव समास है। आगे प्रयाप्ति कहिए है। सो प्रथम गुणस्थान से लगाईत चौदहवें पर्यन्त छहों प्रयाप्ति हैं। आगे प्राण कहिए हैं। सो मिथ्यात से लगा इत बारहवें गुणस्थान पर्यन्त तो दश प्राण हैं। और तेरहवें के अप्रयाप्ति में तो आयु काय, दो प्राण हैं। और प्रयाप्ति में च्यार हैं। और अयोग में एक आयु प्राण है।। आगे संज्ञा कहे हैं। तहाँ संज्ञा च्यारि हैं। सो तहाँ प्रथम तें लगाय प्रमत छठे तांई संज्ञा हैं। सातवें, आठवें, गुणस्थान में अहार विना तीन संज्ञा है। और नव में मैथुन परिग्रह यह दोय संज्ञा है। और दसमें में एक परिग्रह संज्ञा है। आगे कषायन के अभाव ते संज्ञा का भी अभाव है। यह संज्ञा है तै कषायन के योग ते होय है। सो अप्रमत में ध्यान अवस्था तैं अहार विहारादि प्रमाद के अभाव तैं अहार संज्ञा का अभाव है। और भय कषाय का नीमति ते भय संज्ञा उपजे है। और वेद कषाय तैं मैथुन संज्ञा होय हे। और लोभ कषाय का निमित पाय परिग्रह संज्ञा होय है। यहाँ कषाय नांही तहाँ संज्ञा भी नांही। ऐसे संज्ञा जानना।। आगे उपयोग बारह है तहाँ मिथ्यात, सासादन, दऊ गुणस्थान में दशन दोय कुज्ञान तीन ए पाँच उपयोग है। और मिश्र गुणस्थान में मिश्र ज्ञान तीन, दर्शन, दोय, ए पाँच उपयोग है। चौथे पंचमें में सुज्ञान तीन, दशन तीन ए सात उपयोग है। और तेरहवें चौदहवें में केवल ज्ञान केवल दर्शन ए दोय उपयोग हैं। ऐसे सामान्य वीस प्ररुपणा का स्वरूप कहना। आगे, ध्यान, आश्रव, जाति, कुल, ए चारि गुणस्थान प्रति लगाइए हैं। **ध्यान**– प्रथम ही ध्यान के सोलह भेद हैं पहिले और दूसरे गुणस्थान में अर्त ध्यान, और रौद्र के भेद आठ और धम्र ध्यान में एक आज्ञाविचय ए नव ध्यान हैं। और असंयत में आर्त रौद्र के आठ भेद और आज्ञा विचय और अपाय विचय ए दोय धर्म ध्यान के ऐसे दस भेद हैं और पंचमें में आर्त रौद्र के आठ और आज्ञा. अपाय. और विपाक विचय ये धम्र ध्यान के तीन सव ज्ञारह ध्यान होते हैं। और प्रमत में धर्म ध्यान च्यारि, अर्त ध्यान निदानबंध विना तीन यह सात ध्यान हैं और अप्रमत में धर्म ध्यान के चार भेद हैं और आठमें ते लगाय ज्ञारह वैं पर्यन्त एक पृथक्त्व विर्तक विचार नाम शुक्ल हैं और बारहवें गुणस्थान में एकत्व विर्तक विचार नामा शुक्ल ध्यान है। और तेरहवें में सूक्ष्म क्रिया प्रति पाति नाम शुक्ल ध्यान है और चौदहवें मं व्यपरति क्रिया निवतीं नाम शुकल ध्यान है। इति ध्यान

आगे गुणस्थान प्रति आश्रव कहिए है

आश्रव के भेद सत्तावन है। तहाँ मिथ्यात्व में अहारक द्विक योग बिना पचपन आश्रव है और सासादन में पंच मिथ्यात्व व अहारक द्विक विना पचास आश्रव है और मिश्र में कषाय इक्कीस, योग

दस, अवरत बारह, सर्व मिल तियालिस आश्रव है। आगे चौथे में अवरत वारह, कषाय इक्कीस योग तेरह, सर्व मिलि छेआलिस आश्रव हैं और पंचम में कषाय सतरा, योग नव, अवरत ज्ञारा, ए सर्व मिलि सैंतिस आश्रव है और प्रमत में कषाय तेरह योग ज्ञारह ए सर्व मिलि चौबीस आश्रव है और सातवे आठवें में कषाय तेरह योग नव मिलि कर बाईस आश्रव है और कषाय सात ओर योग नव मिलि आश्रव सोलह नव में गुण स्थान में है। और कषाय एक योग नव मिलि दश आश्रव सुक्ष्म सांपराय में है और ज्ञारहवें बारहवें में नव योग आश्रव हे और तेरहवें में सात योग आश्रव है चौदहवें में आश्रव नांही।

इति आश्रव प्ररुपण
आगे जाति गुणस्थान पै कहिए है।

तहाँ जाति (योनी) चौरासी लाख है सो प्रथम गुण स्थान में तो सर्व जाती है। और सासादन, मिश्र, असंयत, इन तीन में देव नारक पंचेन्द्रीय तिर्यंच मनुष्य, इन की छब्बीस लाख जाति है। और पंच में मनुष्य, तिर्यंच सम्बन्धी अठारह लाख जाति हैं। और प्रमत सें लगाय अयोगि पर्यन्त, मनुष्य सम्बन्धी चौदह लाख जाति है। इति जाति प्ररूपण समाप्त।

आगे गुणास्थान पै कुल लगाइये है।

कुल सर्व एक सौ साढे सत्याणवे लाख कोड़ि कुल हैं। तहाँ मियात में सर्व कुल है और सासादन, मिश्र, असंयत इन तीन में इनमें एकेन्द्रीय विकलेन्द्री सम्बन्धीं घटाय एक सो साढ़े छै लाख कोड़ि कुल हैं। और[2] प्रमत तें लगाय चौदहवें गुणस्थान पर्यन्त मनुष्य सम्बन्धी बारह लाख कोड़ी कुल हैं। इति कुल प्ररुपण समाप्त।।

आगे गुणस्थान सम्बन्धी जीवन की
कितनी संख्या है बताओ

प्रश्न नं. ४ उत्तर

तहाँ प्रथम ही मिथ्याती जीवन की संख्या कहिए है।

---

[2] पंचम गुण स्थान में पंचेन्द्रीय तिर्यंच मनुष्य सम्बन्धी साडे पचपन लाख कोड़ि कुल हैं।

गाथा—थावर मिच्छ अणंतो, विकलतिय पंचखय सव विणसंखा। देव असंख्यणास्य, मिच्छणर संस्व आसयंदेव

अर्थ— स्थावर एकेन्द्रीय मिथ्या तीन की राशी अनन्त है और विकलत्रय मिथ्या दृष्टि राशि असंख्यात है और मिथ्यादृष्टि देव असंख्यात है। नारक मिथ्यादृष्टि असंख्यात है। मनुष्य मिथ्यादृष्टि संख्यात है। ऐसे चारगति सम्बन्धी मिथ्यादृष्टि जीवन की संख्या का प्रमाण कहना। अब पाँच स्थावर जीवन की संख्या का प्रमाण कहिए हैं। तिनमें सबसे थोड़े प्रमाण धारी अग्नि काय के जीव जानना। सो भी ऐसे—एसे असंख्यात लोकन के जेते प्रदेश होंय, तेतै अग्निकाय जीव हैं। और अग्निकाय तैं असंख्यात अधिक पृथ्वीकाय जीव हैं और पृथ्वीकाय ते असंख्याते अधिक अपकाय के जीव हैं और अपकायते अधिक वायु काय के जीव हैं और पृथ्वीकाय तै असंख्याते अधिक अपकाय के जीव हैं और अपकार्यते अधिक वायु काय के जीव हैं। और अग्निकाय के असंख्यातवें भाग घटते दो इन्द्री जीव हैं। दो इन्द्री तें असंख्याते घाटी ते इन्द्री जीव हैं। ते इन्द्रीय से असंख्यात घाटि चौ इन्द्री जीव हैं। और चौइन्द्रियतें असंख्याते घाटी पंचेन्द्रीजीव हैं। ऐसे सर्व से थोड़े पंचेन्द्री जीव हैं। तिनमें भी मिथ्याती बहुत हैं। और पंच ही स्थावर में कहे जीव जीतने हैं उनसे अनन्त गुणों जीव वनस्पति का प्रमाण जानना। इन पंच सीावरन में सूक्ष्म जीवराशी बहुत है, वादर थोड़े हैं। काहे ते सो बताइये हैं। कि सूक्ष्म जीवों का क्षेत्र तो लोक है। सर्वलोक सूक्ष्म पंचस्थावर जीवन ते घृत घट्ठवत भरा है और वादर, सहाय— तैं होय है। सो सहाय का क्षेत्र अल्प है। तातें सूक्ष्म राशि विशेष, वादर राशी थोड़ी, ऐसा जानना सो यह स्थावर विकलत्रय राशि, ऐतोसर्व मिथ्यात समुद्र में मगन ही है। और च्यारी गति सम्बन्धी पंचेन्द्रियन में भी मिथ्यात राशि बहुत हैं और सम्यक दृष्टि थोड़े हैं। सो अगली गाथा में सम्यगदृष्टि चारगति सम्बन्धी अरु सासादन मिश्र गुणस्थान अविरत तथा पंचम षष्टम तें लगाय चोदहमा गुणस्थानवर्ती जीवन का प्रमाण कहिए है।

गाथा—वावण इकसयच उक्को, सताय तिदसय कोडीए सासामिस्सा संजय, देस संजाय होयणर भव्वा

भव्यराशी मनुष्यन में—सासादन गुणस्थानवर्ती मनुष्य वावन कोडी हैं। (५२००००००) और मिर गुणस्थान वर्ती मनुष्य एक सौव चारी कोड़ी है। (१०४००००००) एक अरब च्यारिकोड़ि ओर असंयत चौथे गुणस्थानवर्ती मनुष्य सात कोड़ी हैं। (७००००००)

और पंचगुणस्थानवर्ती मनुष्य तेरह कोडि हैं। ऐसे सासादन से लगाय पंचम गुणस्थान वर्ती कहे। सो उत्कृष्ट पने कहे। इनते अधिक नहीं होय। ऐसा जानना। इति। मनुष्यन में गुणस्थानवर्ती जीवन का प्रमाण कहना आगे देव, नारकी, तिर्यंचन में सासादन, मिश्र, असंयत, तिनका प्रमाण, अरु पंचम गुणस्थानवर्ती तिर्यंच और छट्ठे गुणस्थान तै लगाय चौदहवें गुणस्थानवर्ती मनुष्य का प्रमाण कहिए है।

गाथा—सुरय सुणारय गतयो, सासामिस्सोअसँज विणसंखा

असंख पसु अणु वरती, पमतादो णो कोड़िति उणोय

अर्थ— देव नारक तिर्यञ्चच यह असंयत सम्यक्दृष्टि, मिश्र, सासादान और तिर्यञ्च देश संयमी ए सर्व प्रत्येक असंख्यात जानना और पमत तें लगाय अयोगि पर्यन्त जीवन का प्रमाण तीन घाटी नव कोडि जानना। (९९९९९९९७) तीन गति सम्बन्ध सासादन, मिश्र, असंयमी, देश संयमी, तिनके प्रमाण की अधिक हीनता बताइये है। सो सर्व तें बहुत सम्यकदृष्ठि देवन में हैं। सो ही दिखाइये हैं। तहाँ प्रथम वो युगल स्वर्ग में सम्यकदृष्टि सबसे अधिक हैं। सो असंख्यातें है ते सर्वपल्य के असंख्यात वें भाग जानना। याही युगल के सम्यगदृष्टि तैं असंख्यातवें भाग यहाँ के मिश्र गुणस्थानी हैं। और इन मिश्र तें संख्यातवें भाग प्रथम युगल के सासादनी हैं। और प्रथम युगल के सासादनी तैं दूसरे युगल स्वर्ग के सम्यगदृष्टि असंख्यातवें भाग यहाँ ही के मिश्र गुणस्थानी हैं इन मिश्रन तैं संख्यातवें भाग इसंही दूसरे युगल के सासादनी हैं। और दूसरे युगल के सासादनी ते असंख्यात वें भाग तीसरे युगल के सम्यग्दृष्टिन का प्रमाण है। इन सम्यगदृष्टिन ते असंख्यातवें भाग यहीं के मिश्र हैं। इन मिश्रनतें संख्यातवें भाग तीसरे युगल के सासादनी हैं। और तीसरे युगल के सासादनीन ते असंख्यातवै भाग चौथे युगल के सम्यगदृष्टि हैं इनतै असंख्यातवें भाग मिश्र गुणस्थानी हैं मिश्रन तै संख्यातवें भाग यहाँ ही के सासादनी हैं और छट्ठे युगल के सासादनीतैं असंख्यातवैं भाग जोतिष देवन के सम्यगदृष्टि हैं। तिनमें असंख्यातवें भाग मिश्रगुणस्थानी हैं मिश्रन तैं संख्यातवे भाग जोतिषीन के सासादर्नी हैं और ज्योतिषीन के सासादनी तैं असंख्यातवें भाग व्यतरन में सम्यगदृष्टि हैं। यहाँ के सम्यगदृष्टिनतैं असंख्यात भाग मिश्र है। और व्यंतर मित्रनते संख्यातवैं भाग सासादनी व्यंतर हैं। आगे सासादनी व्यंतरनतैं असंख्यातवे भांग भवनवासीन के सम्यगदृष्टि हैं। सम्यक्तीनतैं असंख्यातवे भाग मिश्र हैं। मिश्रनतें संख्यातवे भाग भवनवासी सासादनी हैं। आगे सासादनी भवनवासीनतैं असंख्यातवे भाग तिर्य चन के सम्यगदृष्टि हैं। सम्यगदृष्टिनते असंख्यातवें भाग मिश्रगुणस्थानी तिर्यञ्च हैं। मिश्रते संख्यातवे भाग सासादनी तिर्यञ्च हैं। ओर जेतेदेश संयमी तिर्यञ्च हैं तितने ही प्रथम नरक में सम्यगदृष्टि हैं इनते असंख्यातवें भाग मिश्रसम्यक्ति हैं। इन मिश्रनते संख्यातवे भाग मिश्र सम्यक्ती हैं। इन मिश्रनतें संख्यातवें भाग दूसरे नरक के सासादनी जीवन का प्रमाण है। और दूजीपृथ्वी के सादनीनतें असंख्यातवें भाग तीसरे नरक में सम्यगदृष्टि है। इन सम्यक्तीन से असंख्यातवे भाग मिश्र हैं। मिश्रनतें तीसरे नरक के सासादनीनतैं असंख्यात के भाग चौथे नरक के सम्यक दृष्टि हैं। इन सम्यक्तीन तैं असंख्यातवें भाग यहाँ ही के मिश्र हैं। इन मिश्रन तैं संख्यातवें भाग चौथे नरक के सासादनी हैं। चौथे नरक के सासादनीनतैं असंख्यातवे भाग पंचमनर्क के सम्यगदृष्टि हैं। इनतै असंख्यातवे भाग पंचमनर्क के मिश्र सम्यक्ती हैं। मिश्रनते संख्यातवें भाग पंचम नर्क के सासादनी हैं। पंचमनर्क के सासादनीन तैं असंख्यातवे भाग छट्ठे नरक के सम्यकदृष्टि हैं। इनते यहाँ ही के मिश्र असंख्यातवें भाग हैं। इनते संख्यातवे भाग छट्ठे नरक के सासादनी हैं। इन छट्ठे नरक के सासादनीन तै सातवें नरक के सम्यगदृष्टि असंख्यातवे भाग है। इन सम्यक्तीन तैं असंख्यातवें भाग यहाँ ही के मिश्र सम्यक्ती है। इन सातवे नरक के मिश्रन तैं संख्यातवें भाग सातवें नरक के सासादनी हैं। यहाँ तांई षट् युगल भवनत्रिक में पंचेन्द्री तिर्य चन में, सात ही नारकीन मैं सम्यगदृष्टिन तैं असंख्यातवैं भाग मिश्र अरु मिश्रतैं संख्यातवें भाग सासादनी ऐसा अनुक्रम कहना। आगे सात में युगल तै संख्यात भाग का अनुकर्म लिए जानना। आगे सातवे नरक के सासादनीन तें संख्यातवे भाग सात में युगल के सम्यगदृष्टी देव है। सात में युगल के सम्यक्तीन तैं संख्यातवैं भाग यहाँ ही के मिर है। इन मिश्रनतैं संख्यातवे भाग सात में युगल के देव

सासादनी है और सात में युगल के सासादनीन तैं संख्यातवैं भाग आठ में युगल में सासादनी हैं। और आठमें युगल में सासादनीनतैं संव्यातवें भाग प्रथम गिरेवक में सम्यगदृष्टि है। इनतैं संख्यातवैं भाग यहाँ के मिश्र है। इन मिश्रन तैं संख्यातवे भाग प्रथम गिरिवेक के सासदनी हैं। इन प्रथम गिरिवैक के सासादनीन तें संख्यातवें भाग दूसरे गिरिवैक में सम्यगदृष्टि है। इन सम्यक्तीन तैं संख्यातवे भाग यहाँ के मिश्र है। इन मिश्रन ते संख्यात वे भाग दूसरी गिरिवैक के ससादनी है। इन दूसरी गिरिवेक के सासादनीन तें संख्यातवे भाग तीसरी गिरिवैक के सम्यगदृष्टिन का प्रमाण है। इन सम्यक्तीन के संख्यातवें भाग यहाँ के मिश्र जीव हैं। इन मिश्रन तैं संख्यात वैं भाग तीसरी गिरिवैक के सासादनी है। इन तीसरी गिरिवैक के सासादनीन तैं संख्यातवैं भाग चौथे गिरिवैक के सम्यगदृष्टि है। इनतै संख्यातवें भाग यहाँ के मिश्र सम्यक्ती हैं। मिश्रनतैं संख्यातवे भाग चौथी गिरिवक के सासादनी हैं इन चौथे गिरिवक के सासाददोन तैं संख्यात वैं भाग पंचम गिरिवक के सम्यगदृष्टी है। इनते संख्यातवे भाग यहाँ के मिश्र सम्यगधारी हैं। मिश्रनते संख्यातवे भाग पंचम गिरवैक के सासादनी है। अरुपंचम गिरिवक के सासादनीन तैं छट्टी गिरिवक के सम्यगदृष्टि हैं। सो संख्यातवें भाग है। इन सम्यक्तीन तैं संख्यातवे भाग यहाँ के मिर है। इन मिश्रन तें संख्यातवें भाग छट्ठी गिरिवक के सासादनी हैं। इन छट्ठी गिरिवक के सासादनीन तैं सांतवी गिरिवक के सम्यगदृष्टि संख्यातवे भाग है। इनते संख्यातवें भाग यहाँ के मिश्र हैं। इन मिश्रनतै संख्यातवे भाग सातमी गिरिवक के सासादनी हैं और सातवी गिरिवक के सासादनीनतैं संख्यातवे भाग आठमी गिरिवक के सम्यगदृष्टी है। इनते संख्यातवे भाग यहाँ के मिश्र है। मिश्रन ते संख्यातवे भाग आठमी गिरिवक के सासादनी हैं और आठमी गिरिवक के सासादनीन तें संख्यातवे भाग नवमी गिरिवक के सम्यगदृष्टि हैं। इनतै संख्यातवे भाग यहाँ के मिश्र। मिश्रनतै संख्यातवे भाग नव ग्रीवक के सासादनी हैं। ऐसे प्रथम युगल ते लगाय नवग्रीवक पर्यन्त अनुक्रम तैं असंख्यात भाग कही संख्यात भाग घटे; परन्तु अन्तग्रीवक में जे सम्यगदृष्टी है। ते भी असंख्याते जानना। और इन अतग्रीवक तैं अल्पसम्यगदृष्टी देव उपरले नव अनुतर में हैं। यहाँ सर्व सम्यगदृष्टी हैं। नव ग्रीवक उपरमिथ्याती नांही। सर्व सम्यगदृष्टी है। अनुत्तरों में थोरे विजय, वैजयत, जयत, अपराजित, इन च्यारिविमान में सम्यगदृष्टी है। इन च्यारि विमानन तें असंख्यातवे भाग जीव सर्वार्थ सिद्धि विमान में है। सो सर्व संख्यातें जानना। अढाई द्वीप वासी मनुष्य का जो प्रमाण है। तिनते नव गुणे स्वार्थसिद्धि के देवन का प्रमाण जानना ऐसे च्यारिगति सम्बन्धी सम्यकदृष्टि, मिश्र, सासादन, देससंयमी, इनका सामान्य प्रमाण कह्या। आगे कहे गाथा विषे सकल संयमीन का प्रमाण तीन घाटि नव कोडि जीव नव गुणस्थान सम्बन्धी तिन की गुणस्थान प्रति कहिए हैं। सो प्रथम नैं छट्ठे गुणस्थान सम्बन्धी तिन की गुणस्थान प्रति कहिए हैं। सो प्रथमनैं छट्ठे गुणस्थान बरती यतीन का प्रमाण पाँच कोडी तिरानवे लाख अठयानवें हजार दोयसै छै, सो (५९३९८२०६) जानना। और अप्रमत सातवैं गुणस्थान वरनी गूनीन का प्रमान दो कोड़ि छयाणवे लाख निन्याणवें हजार एक सौव तीन (२९६९९१०३) एते जसपपे। और च्यारिउपशम श्रेणी के गुणस्थान बारे जीव ग्यारासोंव छयानवें (११९६) जानना। और चारों गुणस्थान क्षपकश्रेणि वारे जीव सो उपशम बारे तें दूना जानना तेइससौवबाणवें (२३९२) और तेहरवें सयोग गुणस्थान बरनी जीवन का प्रमाण आट लाख अठयाणवे हजार पाँचसै दोय (८९८५०२) एते जानना और चौदवैं गुणस्थान सम्बन्धी जीवों का प्रमाण पाँचसौ अठयाणवैं जानना ऐसे प्रमत गुणस्थान तै लगाय अयोग प्रर्यन्त आठ कोडि निन्याणवैं लाख निन्यानवे हजार नवसे सत्याणवै (८९९९९९९७) ए सर्व जानना। ए नानाजीव नाना काल अपेक्षा उत्कृष्ट पणो कथन है। इनते अधिक प्रमाण नहीं होय, निश्चय कर ऐसा जानना और छः महीना आठ समय में छः सौ आठ जीव को मोक्ष होय है। ऐसा जानना और

कदाचित उपशम श्रेणिका भी विरह पड़े तो छ: महीना कोई जीव उपशम श्रेणि नहीं चढै। और अन्त के आठ समय में तीन सौव चार जीव (३०४) उपशम श्रेणी माँ है। ताकि विधि– जो प्रथम समय में सोलह १६, दूसरे समय में चौबीस २४, तीसरे समय में तीस ३०, चौथे समय में छत्तीस ३६, पञ्चम समय में बयालीस ४२, छट्ठे समय में अड़तालीस ४८, सातवे समव में चौवन ५४, अठवे समय में चौवन ५४, ऐसे इन आठ समय में तीन सौ चार जीव निरन्तर उपशम श्रेणि माँ है। और कदाचित क्षायिक श्रेणि का उत्कृष्ट अन्तरमडै तो षट् मांश, होय तो अन्त के आठ समय में छ:ह सो आठ जीव निरन्तर मांडै– सो प्रथम समय में बत्तीस ३२, दूसरे में अड़तालीस ४८, तीसरे समय साठ ६०, चौथे समय बहत्तर ७२, पञ्चम समय में चौरासी ८४, छट्ठे समय में छयाणवे ९६, सातवे में एक सौ आठ १०८, ऐसे आठ समय में निरन्तर श्रेणि चढै है। और कादाचित् एक समय युगपत क्षायक श्रेणि मांडै तौ चार सौ वत्तीस, जीव एके काल मांडे। ताकि विधि– जो इनमें कौन–कौन जीव श्रेणि चढ़े सो कहिए है। तहाँ बुद्धि बोधित ऋद्धि के धारी एक सौ आठ जीव और पुरुष वेद सहित श्रेणि चढै ऐसे जीव एक सौ आठ १०८ और स्वर्गनतैचय मनुष्य होय महाव्रत धारी क्षयक श्रेणि मांडै ऐसे जीव एक सौ आठ १०८ और प्रत्येक बुद्धि रिद्धि के धारी क्षयक श्रेणि चढै ऐंसे जीव दस १० और तीर्थंकर प्रकृति के उदय सहित तीर्थंकर पदवी धारी क्षयिक श्रेणी जीव षट ६ ओर स्वीवेद सहित श्रेणि चढे ऐसे बीस २० और नपुंसक वेद सहित श्रेणि चढै ऐसे जीव दस १० और मनपर्यय ज्ञान सहित श्रेणि माडै ऐसे। जीव बीस २० और अवधीज्ञान सहित श्रेणी चढै ऐसे जीव अट्ठाइस २८ और उत्कृष्ट अवगाहना के धारी मोक्ष होने योग्य शरीर सहित क्षायक श्रेणि चढै ऐसे जीव दोय २ और मोक्ष होने योग्य जघन्य अवगाहाना के धारी ऐसे जीवच्यारि। और मध्यम अवगाहना के धारी श्रेणि चढैं जीव आठ ८ ऐसे ऐ कहे जीव युगपत एक समय चारसों बत्तीस (४३२), जीव क्षायक श्रेणि चढै हैं। सो जानना। और युगपत एक समय उपशम श्रेणि चढने वारे क्षायिक तैं आये इन्हीं पदस्थ वारे जीव दोसौ सोलह (२१६) जानना । और कदाचित् केवल ज्ञान का विरह काल पड़ै तो षट् महीना तांई कोई जीव को केवल ज्ञान नहीं उपजै। अठाई दीप में तो अन्त के आठ समय में बाइस २२। जीवन को केवल ज्ञान होय। ताकी विधि आदि के षट् समय में तीन–तीन जीव एक–एक समय में केवली होय। और अन्त के दो समय में दोय–दोय जीव केवली होंय ऐसे अन्त के आट समय में बाइस कहे और कोई आचार्य, अन्त के आठ समय में चवालीस केवली कहे हैं। सौ आदि के षट् समय में षट्–षट् अन्त के दोय समय में च्यारी–च्यारी जीव केवली होय। और केई आचार्य अठयासी केवली कहे हैं। तहाँ आदि के षट् समयन में बारह–बारह और अन्त के दो समय में आठ–आठ ऐसे अन्त के समय में केवल होंय हैं। और केई आचार्य अन्त के आठ समय में एक सौ छेहत्तर १७६ केवली कहे हैं सो आदि के षट् समय में चौबीस–चौबीस और अन्त के दो समय में सोलह–सोलह केवली होय है।

इति णस्थान संख्या समाप्त।

धर्म का क्या स्वरूप है सो बताओ

प्रश्न नं. ५ उत्तर।श्लोक।।

सधर्मीयोदया युक्त: सर्वप्राणि हितप्रद:।
स एवो तारणेशक्ती भवाम्भोधो सुदुस्तरे।।

अर्थ— धर्म उसे कहते हैं जो जीवों को संसार समुद्र में डुबने से बचावे तथा जो सदा उत्तम सुख देवे। ऐसा धर्म वही है। जो यह सिखाता है कि सर्व प्रणीमात्र पर दया भाव रक्खो किसी को कष्ट मत दो अपने आत्मा व पर की आत्मा को कभी मत सताओ। ऐसा विश्व प्रेममय अहिंसा भाव ही धर्म है। जिसके परिणाम में सर्वमैत्री भाव जग उठता हैं। द्वेष भाव निकल जाता है, कोई छोटा है कोई बड़ा है यह रागद्वेष भी नहीं रहता है। सर्व विश्व की आत्माएँ स्वभाव से समान है। ऐसा साम्य भाव प्रगट हो जाता है। यही साम्य भाव आनन्दप्रद है। व संसार में डुबाने वाले कर्मों का नाशक है यही भाव उस बात की प्रेरणा करता है कि अपने आत्मा को भी क्रोधादिक हिंसक भावों से बचाओ तथा जग के प्राणियों के साथ व्यवहार करते हुए उनकी भी यथा सक्ती रक्षा करो। प्रमादभाव से वर्तमन न करो जिससे प्राणि वृथा कष्ट न पावे तथा धर्म की और भी चार प्रकार कर प्रख्यणा करी हैं सो प्रथम तो वस्तुस्वभाव तथा उत्तमक्षमादि दशप्रकार तथा सम्यग्दर्शन ज्ञान, चरित्र रूप तथा जीवन की रक्षारूप, ऐसे च्यार प्रकार है। तहाँ निश्चय कर साधिये तब तो सर्व में एक ही प्रकार है जाते वस्तु स्वभाव कहने तै जौ जीवनामा वस्तु का परमार्थरूप दर्शन ज्ञान परिणाम मई चेतना है, सो यह चेतना सर्व विकारन तै रहित शुद्ध स्वभाव रूप परिणमैं सोही याका धर्म है। बहुरि उत्तम क्षमादिरूप दश प्रकार कहने तै क्रोधादि कषायरूप आत्मा न होय अपने स्वभाव में स्थिर होय सोही धर्म है। यह भी शुद्ध चेतन रूप ही भया। बहुरि दर्शन, ज्ञान, चारित्र कहने तै तीन एक ज्ञान चेतना ही के परिणाम हैं, सो ही ज्ञान स्वभावरूप धर्म है। बहुरि जीवन की रक्षा कहने तैं जीवकै आपकै तथा परके क्रौधादि कषायन के वशतै पर्याय का विनाश रूप मरण तथा दु:ख संक्लेश परिणाम न करना यह अपना स्वभाव, सोरी धर्म है। ऐसे शुद्ध द्रव्यार्थिक रूप निश्चय नय करिसध्या हुवा धर्म एक ही प्रकार है। वहुरि व्यवहारनय है सो पर्यायाश्रित है सो यह भेद रूप है, सोयाकरि विचारिये तब जीव के पर्यायरूप परिणाम अनेक प्रकार है तातै धर्म भी अनेक प्रकार करि वर्णन किया है। तहाँ एक देश को प्रयोजन के वास्तै सर्व देशकर कहिए सो व्यवहार है। वहरि अन्य वस्तु विषैं अन्य का आरोपण अन्य के निमित तै तथा प्रयोजन के वशतै करिये सो भी व्यवहार है। तहाँ वस्तुभाव कहने में तो जे निर्विकार चेतना के शुद्ध परिणाम के साधक रूप मंदकषाय रुप शुद्ध परिणाम है तथा बाह्य क्रिया है ते सर्व ही व्योहार धर्मकरि कहिये हैं। बहुरि तै येही रत्नत्रय कहने तै स्वरूप के भेद दर्शन ज्ञान चारित्र तथा तिनके कारण बाह्य क्रियादिक हैं ते सर्व ही व्यौहार धर्मकारी कहिए हैं तथा तैसेही जीवन कि दया कहने तै क्रोधादि कषाय मंद होने ते अपने वा पर के मरण दु:ख क्लेश आदि न करना, तिसके साधन वाह्य क्रियादिक तै सर्व ही धर्म करि कहिये हैं। ऐसे निश्चय और व्यवहारनय करि साध्याहवा जिनमत में धर्म कहा ही वहाँ एक स्वरूप अनेकस्वरूप कहने तैं स्याद्वाद में विरोध नांही आवे है। ऐसे धर्म का श्रद्धा प्रतीति रुचीसहित आचरण करना सोही दर्शन है यही धर्म की मूर्ति है। इस भाँति धर्म का स्वरूप जानना।

प्रश्न ५ गुण श्रेणी निर्जरा के कितने स्थान हैं

।।श्लोक।।

मिच्छादो सदिद्वी असंख्य गुणि कम्मणि जराहोदि
ततो अणुवयधारी ततोय महव्वई णाणी।।

पढम कषाय चउण्हं बिजोज ओतहय खव्य सीलोय
दंसण मोहतियस्स यततो उपसमम चत्तारि।।
खवगोय क्षीण मोहो सजोइणाहो तहा अजोइया।।
एन्दे उवरिं उवरिं असंख्य गुण कम्मणिज्जरया।।

भावार्थ— प्रथमोसम सम्यक्त की उत्पत्ति विषे करण त्रयवर्ती विशुद्ध परिणाम युक्त दृष्टि के जो निर्जरा होय हे तिसते असंयत सम्यग्दृष्टि के असंख्यातगुणी निर्जरा होय हैं— या तैं देशवर्ति श्रावक को असंख्यात गुणी निजरी हौ है यातें महाव्रती मुनीन के असंख्यात गुणी निर्जरा हो है यातै अनुंतानुबंधी कषाय का विसंजोजन कहिये अप्रत्याख्यानादि रूप परिण भावना ताके असंख्यात गुणी निजरा होय है। यातै दर्शन मोह का क्षय करनेवाले के असंख्यात गुणी होय है। याते उपशम श्रेणी वाले के तीन गुणस्थान में असंख्यात गुणी निजरा होय है। यातै उपशान्त मोह ग्यारहमा गुणस्थान वाले के असंख्यात गुणी निर्जरा हो है यातै क्षपक श्रेणी वाले तीन गुणस्थान विषे असंख्यात गुणी निर्जरा होय है। यातै क्षीण मोह वारहमा गुणस्थान वाले के असंख्यात गुणी निर्जरा होय है। यातै अयोग केवली कै असंख्यात गुणी निर्जरा होय हे। यातै अयोग केवली को असंख्यात गुणी निर्जरा होय है। यातै याही को गुण श्रेणी निर्जरा कहिए है। इसी

भाँति गुणश्रेणी निर्जरा का वर्णन जानना।।

इति गुणश्रेणी निजरी

रत्नत्रय धर्म का क्या स्वरूप है। बताइए

प्रश्न नं. ६ उत्तर

।।श्लोक।।

सम्मंदृशण णाणं चरणं मुक्खस्स कारणं जाणे।
व्यवहारा णिच्छयदो ततियम ईओनियो अप्पा।।

अर्थ— सम्यग्दर्शन, सम्यगान, सम्यक् चारित्र इनी तीनों के समुदाय को व्यवहार से रत्न त्रय कहते हैं अवसम्यग्दर्शन का सरूप कहते हैं। सच्चा श्रद्धान सच्चा ज्ञान और सच्चा आचरण यह तीनों बात इकट्ठी होने से ही मोक्ष की सिद्धि होती है। और वास्तव में तीनों गुण आत्मा के ही हैं इसलिए निश्चय से आत्मा ही को मोक्ष का कारण जानो यही तीनों कारण तीन रत्न अर्थात् रत्न त्रय कहलातै हैं।

।।श्लोक।।

रयणतयंन वहइ अप्पाण मुइन्तु अणणादि विअस्मि
तम्हा ततिय मइउ होदिहु मुक्खस्स कारणं आदा।।

अर्थ— आत्मा के सिवाय अन्य किसी द्रव्य में रत्न त्रय नहीं रहता है। इस कारण रत्न त्रय मयि जो आत्मा है यह ही निश्चय नय से मोक्ष का कारण है।

भावार्थ— दर्शन, ज्ञान, चारित्र यह आत्मा ही में होते हैं। पुंगल, धर्म अधर्म, आकाश ओर काल इन पाँचों द्रव्य में से किसी द्रव्य में दर्शनज्ञान चारित्र नहीं हो सकता क्योंकि यह पाँचों द्रव्य अजीव हैं अचेतन हैं, जड़ हैं। इस हेतु जीवात्मा ही वास्तव में मोक्ष का कारण है यही रत्न त्रय का धारक है।

।।श्लोक।।

जीवादी सद्दहणं सम्मतं रुवप्पणोतं तु।
दुरभिणि वेशवि मुक्कं णाणं सम्मं खुहोदि सदि जह्मि।।

अर्थ— जीव आदि पदार्था का जो श्रद्धान करना है वह सम्यक्त है और वह सम्यक्तव आत्मा का स्वरूप है और इस सम्यक्तव के होने पर संसय विपर्य्यय अनध्यसाय रहित ज्ञान को सम्यगान कहते हैं।

भावार्थ— जानना अर्थात् ज्ञान और निश्चय करना, रुचि करना यकीन करना अर्थात् श्रद्धान यह दो पृथक्—पृथक् बातें हैं। ज्ञान और बात है श्रद्धान और बात है फारसीवाले ज्ञान को इल्म और श्रद्धान को यकीन कहते हैं। अंगरेजी में ज्ञान को नौलिज Knowledge और श्रद्धान को विलीफ belief कहते हैं।

धर्म कथन अर्थात् मोक्ष मार्ग में अपनी आत्मा को शुद्ध निरञ्जन मानना और निज आत्मा से भिन्न शरीर आदिक सर्व पदार्थों को भिन्न समझना और सांसारिक व्यवस्था को कर्मों के वश कैद खाना समझ कर इससे छुटकारा पाना आवश्यक समझना अर्थात् इन सब बातों की श्रद्धा मन में होना यही सच्चा श्रद्धान अर्थात् सम्यग्दर्शन हैं। और वस्तु को ज्यों का त्यों जाना सच्चा ज्ञान हैं। जिस ज्ञान में तीन प्रकार के दोष नहीं होते हैं। वही सच्चा ज्ञान होता है। संसय अर्थात् दुविधा रूप ज्ञान कि यह है या वह है इसप्रकार है या उस प्रकार है जैसे आकाश में चमकती हुई वस्तु को देख कर जानना के यह तारा है या पटोरा है। (२) विपरीत तथा उल्टी बात जानना जेसे कोई औषधि कोई रोग उत्पनन करने वाली हो और उसको उसी रोग के दूर करने वाली जानना। (३) अनध्यवशाय का विभ्रम अर्थात् यह मालूम ही न होना यह क्या वस्तु है। संसय में तो किसी वस्तु की वावत दो चार ही प्रकार का खयाल होता है। कि यह है या वह है। परन्तु विभ्रम में तो कुछ पता ठिकाना ही नहीं होता है। जैसे

रास्ते चलते मनुष्य के पैर में धरती पर पड़ी हुई वस्तु लगती है याने स्पर्श हुआ करती है जिससे केवल इतना ही ज्ञान होता है कि कोई वस्तु पैरों से लगती जाती है उसमें समय भी प्राप्त नहीं होता कि अमुक है या अमुक और न कुछ विपर्यय ही होता है।

।।श्लोक।।

सम्यक् चारित्र असुहादो विणिविति सुहे पवितिय जाण चारितं
वद समिदि गुतिरूवं वबहारण यादु जिण भणियम्।।

अर्थ— जो अशुभ कार्य से बचना और शुभ कार्य में लगना है उसको चारित्र जानना चाहिए। श्री भगवान् ने व्यवहार नय से उस चारित्र को व्रत, समिति और गुप्ति स्वरूप कहा है।

भावार्थ— अपने ही सुद्ध आत्म भाव में रमण करना निश्चय चारित्र है और इस अवस्था को प्राप्त होने का जो कारण है वह व्यवहार चारित्र है। वह व्यवहा चारित्र क्या है अशुभ अर्थात् खोटे कार्यों का न करना और अच्छे कार्यों का करना वह अच्छे कार्य जिससे निश्चय चारित्र कि सिद्धि होती है व्रत, समिति और गुप्ति है।

व्रत पाँच प्रकार है। अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह समिति भी पाँच प्रकार है और गुप्ति तीन प्रकार है। इसप्रकार चारित्र तेरह प्रकार है। इसी प्रकार रत्न त्रय धर्म का स्वरूप जानना। सम्यक ज्ञान जीवों को पाँच रीतिये होता है। मति, श्रुति, अवधि, मन पर्यय, वो केवल इसलिए यथार्थ जानने के लिए प्रमाण बताया गया है।

प्रश्न नं. ७

प्रमाण कै हैं बताओ

उत्तर

प्रमाण पाँच हैं कौन—कौन से— स्मृति,
प्रभृति, तर्क, अनुमान, आगम।।

स्मृति— अर्थात पहिली जानी हुई बात को याद करना।

प्रतयभिज्ञान— अर्थात् किसी वस्तु को देख कर यह विचार करना कि यह पहली देखी हुई वस्तु है या उसके समान है या वैसी नहीं है इतयादि जोड़ रूप ज्ञान को प्रतयाभि ज्ञान कहते हैं।

तर्क— अर्थात् व्याप्ति का ज्ञान— दो वस्तुओं के एक साथ रहने के सम्बन्ध को आगे पीछे होने के सम्बन्ध को व्याप्ति कहते हैं जैसे धुआँ अग्नि से ही उत्पन्न होता है। इस तरह धुआँ को देखकर अग्नि का ज्ञान होना और रात के बाद दिन का ज्ञान इसी को तर्क कहते हैं।

अनुमान— व्याप्ति के सहारे से एक वस्तु को देखकर दूसरी वसतु को जान लेना अर्थात् हेतु से साध्य का ज्ञान को अनुमान कहते हैं जैसे धूम को देखकर अग्नि का अनुमान करना पुत्र को देखकर पिता का अनुमान करना। इसमें अग्नि साध्य है ओर धूम हेतु है।

आगम— आप्त के वचन को आगम कहते हैं। और आगम के द्वारा जो ज्ञान होय उसको आगम प्रमाण कहते हैं। सर्वज्ञवीतराग और हितोपदेशक ये गुण जिसमें हो वही आप्त हैं।

प्रश्न नं. ८

नय कै प्रकार हैं बताइये।

उत्तर

नय सात प्रकार है। कौन—कौन से नैगम, संग्रह व्यवहार ऋजुसूत्र, शब्द समभिरुढ और एवं भूत

नैगम— वस्तु मैं अनेक धर्म अर्थात् स्वभाव होते हैं। उनमें से किसी एक धर्म कि मुख्यता लेकर वस्तु को जानना नय है। नय दो प्रकार है एक निश्चय नय, एक व्यवहार नय। नैगम के तीन भेद हैं भूत नैगम, भावी नैंगम, व्रतमान नैगम जैसे महावीर स्वामी आज के दिन निर्वाण गये ये भूत नैगम है। श्रुत केवली को केवली कहना भावी नैगम है। चूल्हे में आग जला तो आटा गुना हो वो कहे रोटी बनाता हूँ यह वर्तमान नैगम है।

संग्रह— संसार में अन्तानन्त वस्तु हैं सबको पृथक्—पृथक् जानना ओर वर्णन करना बहुत कठिन है इस हेतु अनेक वस्तुओं कि एक जाति नियत कर ली जाती है काला, गोरा, लाल, बड़ा, छोटा, तेज चलनेवाला, मंद चलनेवाला इत्यादि प्रकार को केवल थोड़ा कहना संग्रह नय है।

व्यवहार— संग्रह संग्रह नय के ग्रहण किये हुवे विषय को जो भेद रूप करती है वही व्यवहार नय है। जैसे द्रव्य के दो भेद जीव और अजीव करके किसी एक भेद का कथन करना जीव के भेद देव, नारकी, मनुष्य, पशु इसको और घोड़ा बैल कीड़ी, मकोड़ी वृक्ष नीम, आम, अनार, नारंगी, आलू, मूली, आम—मालदा, देसी बम्बई इत्यादि पृथक्—पृथक् वर्णन करना व्यवहार नय है।

पर्यायाथिक नय के चार भेद हैं। ऋजुसूत्र शब्दसमभिरूढ, एवंभूत

ऋजुसूत्र— प्रत्येक वस्तु कि पर्याय समय समय पलटी रहती है; परन्तु जो पर्याय वीत चुकी वा जो वीतने वाली है इन दोनों को छोड़कर वर्तमान पर्यापरि का कथन करना अर्थात् केवल एक पर्यापरि को ग्रहण करना ऋजुसूत्र नय है।

शब्द— जो व्याकरण के अनुसार शुद्ध शब्दों को ग्रहण करता है। वही शब्द नय जानना।

समभिरूढ— किसी पदार्थ में किसी एक मुख्य गुण को लेकर उस पदार्थ के अन्य क्रियारूप प्रवर्तन के समय भी उस ही मुख्य गुण के अनुसार उस वस्तु को ग्रहण करना जैसे न्यायाधीस मुन्सीफ न्याय करते समय मुन्सीफ है अगर और और काम करते समय भी मुनसिफ कहना यह समभिरूढ नय है।

एवंभूत— समभिनय के विरुद्ध अर्थात् जिस काल में कोई वस्तु जो क्रिया करती हो उस ही के अनुसार ग्रहण करना जैसे जिस समय न्याय करता हो उसी समय न्यायाधीस कहना दूसरे समय न कहना यही एवंभूत नय हैं।

प्रश्न नं. ९

निक्षेप कै प्रकार है।

उत्तर

चार प्रकार कौन—कौन से
नाम, स्थापना द्रव्य और भाव।

नाम— नाम निक्षेप उसको कहते हैं। जिसमें गुण तो न पाया जाय और केवल नाम ही रख दिया जाय जैसे किसी का नाम हाथीसिंह है सो न तो हाथी है वो न सिंह ही है। चाहे वह बिल्कुल कमोजर हो हाथी और सिंह कि कोई बात उसमें न हो; परन्तु हाथी सिंह नाम सेही वही मनुष्य समझना चाहिए जिसका वह नाम रक्खा गया है इसी को नाम निक्षेप कहते हैं।

स्थापना— स्थापना निक्षेप के दो भेद हैं एक नदाकार एक अनदाकार जैसे चौपड़ सतरंज खेल में हाथी घोड़ा ऊँट बनाये जाते हैं उनको हाथी घोड़ा ऊँट बताया जाता है जैसे मूर्ति या काष्ट पाखाना की बनाकर नाम रखा जाता है सो यह तदाकार स्थापना हैं और जैसे नकशों में नदी पहाड़ नगर ग्राम का चिह्न दिखाया जाता है यह अतादाकार स्थापना है जैसे किसी देश के नकशे को एक बिन्दी से मालुम करना कि यह अमुक नगर है परवत को परवत के चिह्न से जानना नदी को नदी के चिह्न से जानना इसी को स्थापना निक्षेप कहते हैं।

द्रव्यनिक्षेप— द्रव्यनिक्षेप उसको कहते हैं जिस वस्तु में कोई गुण आगामी प्रगट होगा वा कोई गुण था और अब नहीं है तो भी उसको उस गुण रूप कहना जैसे कोई पुरुष राजा होने वाला है उसको अभी से राजा कहना। कोई पहिले दारोगा था और अब नहीं है परन्तु अब भी उसको दारोगा जी ही कहना इसी को द्रव्य निक्षेप कहते हैं।

भावनिक्षेप— भावनिक्षेप उसको कहते हैं कि वर्तमान समय में जो जैसा हो उसको वैसा ही कहना जैसे राज्य करते तो राजा कहना न्याय करते तो न्यायाधीश कहना इसी को भावनिक्षेप कहते हैं।

पदार्थों का लौकिक व्यवहार निक्षेप से होता है इसलिए इनका भी जानना अवाश्यक है।

प्रश्न नं. १०

स्याद्वाद नय का क्या स्वरूप है बताओ।

उत्तर

स्याद्वाद, कथंचितवाद, अपेक्षावाद और अनेकान्तवाद

वस्तु में अनेक गुण होते हैं। जैसे दूध पीना शरीरक पुष्टि करता है; परन्तु बहुत से रोगों में हानिकारक भी है। इस हेतु दूध लाभदायक भी है और हानिकारक भी है। मनुष्य जो २० वर्ष का है। वह १० वर्ष के बालक से बड़ा और ५० वर्ष के मनुष्य से छोटा है इस हेतु बड़ा भी है और छोटा भी है इस ही प्रकार वस्तु में अनेक गुण होते हैं; परन्तु संसार के अलपज जीव वस्तु के एक ही विषय को लेकर उस ही के अनुसार उसका श्रद्धान कर लेते हैं इस ही का नाम एकान्त मिथ्यात है— जैसे पाप कर्म करने की अपेक्षा दान पूजादिक पुण्य कर्म करना बहुत अच्छा है; परन्तु मोक्ष प्राप्त कि अपेक्षा पुण्य कर्म भी छीड़ने योग्य है। इस हेतु अनेक शास्त्रों में जो पुण्य कर्म का उपदेश दिया गया है उसको ही सम्पूर्ण धर्म मानलेना एकान्त मियात्व है। श्री वीतराग भगवान् हमारा न कुछ बिगाड़ते हैं और न कुछ संवारते हैं क्योंकि वह रागद्वेष से रहित हैं; परन्तु उनका ध्यान करने से उनकी वीतरागता को चिन्तवन करने से हमारे परिणामों में वीतरागता आती है जिससे पाप कर्मों का क्षय होता है इस हेतु उपचार नय से वह हमारे दुःख को दूर करने वाले हैं; परन्तु उनको साक्षात् दुःखों का दूर करने वाला करता परमेश्वर मानना एकान्त मिथ्यात है संखियो (विष) प्राण नाशक है; किन्तु प्राण रक्षक भी है बड़े—बड़े कठिन रोगों में फायदा करता है इसलिए प्राणनाशुक भी है और प्राण रक्षक भी है। एक वस्तु बाजार से खरीद कर आती है जिसको एक मनुष्य बताता है बढ़िया है एक बताता है घटिया है वहाँ पर इससे भी और बढ़िया से घटिया है और घटिया वस्तु से बढ़िया है इसी तरह एकान्त नय है सो मिथ्यात है और अनेकान्त नय है सो सत्य है इसी को स्याद्वाद नय कहते हैं सो इसी भाँति स्याद्वाद नय का स्वरूप जानना।

८४०००००

चौरासी लाख योनि

१.	नित्य निगोद	७०००००	सात लाख
२.	इतर निगोद	७०००००	सात लाख
३.	पृथ्वी काय	७०००००	सात लाख
४.	जल काय	७०००००	सात लाख
५.	वायु काय	७०००००	सात लाख
६.	अग्नि काय	७०००००	सात लाख
७.	वनस्पति काय	१००००००	दस लाख
८.	दो इन्द्री	२०००००	दो लाख
९.	ले इन्द्री	२०००००	दो लाख
१०.	चौ इन्द्री	२०००००	दो लाख
११.	पंचेन्द्री तिर्यञ्च	४०००००	चार लाख
१२.	मनुष्य	१४०००००	चौदह लाख
१३.	देब	४०००००	चार लाख
१४.	नारकी	४०००००	चार लाख

जीवों की कुल कोड़ि का विवरण

संसारी जीवों की एक सौ साडे निन्याणवे लाख कोड़ि कुल हैं। योनि और कुल में क्या भेद है। सो दिखलाया है योनिनाम उत्पत्ति स्थान का है। कन्द योनि, मूलयोनि, गर्भयोनि, रसायोनि, स्वेदयोनि इत्यादि जीवन के उपत्पस्थिान है इन की योनि संज्ञा जाननी इन विषे अनेक जाति के जीव उपजैतिन के भेदन की कुल संज्ञा है। तिसका उदाहरण बड़ पीपल इत्यादि एकेन्द्री के कुल, सीप शंख्य इत्यादि द्वेन्द्रिय के कुल चींटी खटमलादि ते इन्द्रि के कुल भौरा मक्खी इत्यादि चौ इन्द्री के कुल तिर्यंच विषे गाय भैंस इत्यादि मनुष्य विषे क्षत्रि वैष्यादिक पंचेन्द्री के कुल जानना।।

योनि कुल का द्रष्टान्त ऐसा है जैसे एक गोबर का पिण्ड है तिस विषे काली कीट कृमी पट वीजना वीसी इत्यादि अनेक जाति का जीव उपजै तहाँ गोबर का पिण्ड तो योनि है जिसमें जीवन की जाति भेद है सो कुल है। एकसौ निन्यणवे लाख सब कुल कोटि है।। चौदह लाख कुल कोडि मनुष्य का है।

वर्तमान चौबीसीसी गर्भ, जन्म, तप, ज्ञानादि का विवरण

सि.	तीर्थंकरों	मता पिता के नाम	जन्म नगरी	गर्भ कल्याण	जन्म कल्याण	तप कल्याण

न.	के नाम					
१	ऋ.	नाभिराजा मरुदेवी	अयोध्या	अषाढ व. २	चैत्र व. ९	चैत्र व. ९
२	अजि.	जितसत्रु विजयादे	अयोध्या	जेष्ठ व. १५	माघ सु. १०	माह व. १०
३	संभ.	जितारी सेमा	श्रावस्ती	फाल्गुन व. ८	कातिक सु. १५	मगशिर व. १५
४	अभि.	सवर सिद्धादर्था	अयोध्या	वैसाख व. ६	माघ सु. १२	माघ. सु. १२
५	शुभ	मेघप्रभ सुमगला	अयोध्या	श्रावन सु. २	चैत्र सु. ११	चैत्र सु. ११
६	पद.	धारण सुसीमा	कौसाम्बी	माघ व. ६	कातिक सु. १३	कातिक व. १
७	सुपा.	सुप्रतिष्ठ पृथ्वी	काशी	भादो सु. ६	जेष्ठ सु. १२	जेष्ठ सु. १२
८	च.	महासेन लक्ष्मण	चन्द्रपुरी	चैत व. ५	पोष व. ११	पोष व. ११
९	पु.	सुग्रीव रामा	काकंदी	फाल्गुन व. ९	मगशिर सु. १	मगशिर व. १
१०	शी.	दृढ़रथ सुनन्दा	भद्रिका पु.	चैत्र व. ८	माघ व. १२	माघ व. १२
११	श्रेया.	विष्णु विष्णुश्रा	सिंह पुरी	जेष्ठ व. ६	फाल्गुन व. ११	फाल्गुन व. ११
१२	बा.	वासुपूज्य विजया	चम्पापुरी	अषाढ़ व. ८	फाल्गुन व. १४	फाल्गुन व. १४
१३	बिम.	कृतवर्म्मा सुरम्या	कम्पिला	जेष्ठ व. १०	माघ सु. ४	माघ. सु. ४
१४	अन.	सिंह सेन सर्वयण	अयोध्या	कार्तिक व. १	जेष्ठ व. १२	जेष्ठ व. १२
१५	ध.	भानु सुवृता	रत्नपुरी	वैसाख सु. १३	माघ सु. १३	माघ सु. १३
१६	शा.	विश्वसेन ऐरा	हस्तनापुरी	भादबा व. ७	जेष्ठ व. १४	जेष्ठ व. १४
१७	कु.	सूर्य श्री देवी	हस्तनापुरी	श्रावण व. १०	वैशाख सु. १	वैशाख सु. ४
१८	अर.	सुदर्शन मित्रा	हस्तनापुरी	फाल्गुन सु. ३	मगशिर सु. १४	मगशिर सु. १०
१९	म.	कुम्भ राक्षना	मिथलापुरी	चैत्र सु. १	मगशिर सु. ११	मगशिर सु. ११
२०	मु.	सुमित्र राक्षना	राजगृही	श्रावण व. २	वैशाख सु. १०	वैशाख व. १०
२१	न.	विजय वप्रा	मिथलापुरी	आशोज व. २	अशाढ व. १०	अशाढ व. ११
२२	न.	समुद्रविजै शिवादेवी	सौरीपुर	कातिक व. ६	श्रावण सु. ६	श्रावण सु. ६
२३	पा.	अश्वसेन थामा	काशी	वैशाख व. २	पोष व. ११	पोष व. ११
२४	म.	सिद्धार्थ त्रिशला	कुन्डलपुर	अषाढ व. ६	चैत्र सु. १३	मगसिर व. १०

वर्तमान चाबौसी गर्भ, जन्म, तप, ज्ञानादि का विवरण

ज्ञान कल्याण	मोक्ष कल्याण	चिह्न	आयु	कायका प्र.	अन्तराला	कहाँ से निवारण हुए
फाल्गुन व. ११	माघ व. १४	बैल हाथी घोड़ा	८४ लाख पूर्व ७२ लाख	५०० धनु	आदिनाथ से आतक हुवे ५० लाख कोटि	कैलाश सम्मेद
पोस सु. ११	चैत्र सु. ५	बन्दर चकव	पूर्व ६० लाख	४५० धनु	सागर ३० लाख कोटि	शि. सम्मेद
कातिक १४	चैत्र सु. ६	ा कम	पूर्व ५० लाख	४०० ध.	सागर १० लाख कोटि सागर	शि. सम्मेद
पोष सु. १३	बैसाख सु. ६	ल साथि	पूर्व ४० लाख	३५० ध.	९ लाख कोटि सागर ९० हजारा कोटि	शि. सम्मेद
चैत्र व.	चैत्र सु.	या	पूर्व	३००	सागर	शि.

११	११	अर्द्ध	३० लाख	ध.	९ हजार कोटि सागर	सम्मेद
चैत्र सु.	फाल्गुन	चन्द्र	पूर्व	२५०	९०० कोटि सागर	शि.
१५	व. ४	नाकू	२० लाख	ध.	९० कोटि सागर	सम्मेद
फाल्गुन व.	फाल्गुन	कल्प	पूर्व	२००	९ कोटि सागर	शि.
६	व. ७	वृक्ष	१० लाख	ध.	१०० सागरघाटि कोटि	सम्मेद
फाल्गुन व.	फाल्गुन	गेण्डा	पूर्व	१५०	सागर	शि.
७	सु. ३	भैंस	२ लाख	ध.	५४ सागर	सम्मेद
कातिक व.	कातिक	सकर	पूर्व	१००	३० सागर	शि.
२	सु. ८	सेही	१ लाख	ध.	९ सागर	सम्मेद
पोष व.	आसोज	वज्रदे	पूर्व	९० ध.	४ सागर	शि.
१४	सु. ८	ण्ड	८४ लाख	८० ध.	पौनपल्य या तीन	सम्मेद
माघ व.	श्रावण सु.	हिरण	पूर्व	७० ध.	सागर	शि.
१५	१५	बकरा	७२ लाख	६० ध.	आधापल्प	चम्पापुर
माघ सु.	भादवा	मच्छी	पूर्व	५० ध.	छहजार कोटि वर्ष या	वा. व
२	सु. १४	कलश	६० लाख	४५ ध.	पाबपल्या	स. सखर
माघ सु.	अषाढ व.	ा	वर्ष	४० ध.	६५८४०००वर्षघाटि	सम्मेह
६	६	कछव	३० लाख	३५ ध.	कोटि हजार	शिसर
चैत्र व.	चैत्र व.	ा	वर्ष	३० ध.	५४००००००वर्ष	सम्मेह
१५	४	कम	१० लाख	२५ ध.	६००००० वर्ष	शिसर
पोष सु.	जेष्ठ सु.	ल	वर्ष	२० ध.	५००००० वर्ष	सम्मेह
१५	४	शंख	१ लाख	१५ ध.	पौनेचौरासी हजार वर्ष	शिसर
पोष सु.	जेष्ठ व.	सर्प	वर्ष	१० ध.	दोसौ पचास वर्ष	सम्मेह
११	१४	शेर	९५ हजार	९ हाथ		शिसर
चैत्र सु. ३	वैशाख		वर्ष	७ हाथ		सम्मेह
कातिक	सु. १		८४ हजार			शिसर
सु. १२	चैत्र सु.		वर्ष			सम्मेह
पोष व. २	११		५५ हजार			शिसर
वैशाख व.	फाल्गुन		वर्ष			सम्मेह
९	व.५		३० हजार			शिसर
मगशिर	फागुन व.		वर्ष			सम्मेह
सु. १०	१२		१० हजार			शिखर
आश्विन	वैशाख		वर्ष			व.ष.
सु. १५	व. १४		१ हजार			गिरनार
चैत्र व.	आषाढ		वर्ष			सम्मेद
१४	सु. ८		१०० वर्ष			देश
वैशाख सु.	श्रावण सु.		७२ वर्ष			पावापुरी
१०	७					
	कातिक					
	व. १५					

द्वादसांग वाणी का विवरण

(अगले पृष्ठ पर पढिये)

द्वादसांग वाणी का विवरण

अंगो की संख्या	अंगो के नाम	पद संख्या	विशेष
१	आचारांग	१८००० अठारह हजार	इसमें बोलना चालना खाना बैठना
२	सूत्रांग	३६००० छत्तीस हजार	इसमें देव धर्म गुरु के विनय करना
३	स्थानांग	४२००० बयालीस हजार	जीव स्थान के भेद प्रभेदों को कहना
४	समवांग	१६४००० एक लाख चौसठ हजार	पाँच पैनाला पैंतालीस लाख योजन
५	ब्यख्याप्रज्ञप्तायांग	२२८००० दो लाख चौसठ हजार	जीव अस्ति नास्ति आदि साठ हजार
६	ज्ञात्री कथांग	५५५६००० पचपन लाख छप्पन हजार	समव सरन और दीव्यध्वनि
७	उपासकाध्ययनांग	११७०००० ग्यारहलाख सत्तर हजार	श्रावक के आचार वोज्ञारह प्रतिमादि
८	अलंकृतक्ष्सांग	२३२८००० तेईसलाख अठाइस हजार	एक एक तीर्थंकरो के समय में दस
९	अनुतरोहाददसांग	९२४४०००बानवेलाख चवालीस हजार	एक एक तीर्थंकर के समय में
१०	प्रश्नव्याकरणांग	९२१६००० बानवेलाख सोलह हजार	त्रिकाल सम्बन्धी होनहार बातें तथा
११	विपाक सूत्रांग	१८४००००० एककोड़ी चौरासी हजार	कर्म का उदय तथा सुभा सुभ रस
१२	इसका विवरण चौदह पूर्व में किया गया		

चौदह पूर्व का विवरण

विवरण

किया का वर्णन
तथा शास्त्र के सुनने इत्यादि का वर्णन है
यह वर्णन है
का समकथन है
प्रश्नों का वर्णन है
खिरवे का कथन तथा तीर्थ करके अतिसव का कथन है
कों का वर्णन है
दस मुनीश्वरों के केवल ज्ञान पाने का वर्णन है
दस–दसमुनिश्वर उपसर्ग सहकर अहिमंद्र होने का व. है
मुट्ठी में रक्खी वस्तु को बतलाने आदि का व. है
जिस–जिस तरह जीवों के उदय हों सो बतलाने का व.

१ उत्पाद पूर्व १००००००० एक कोटि विशेष विवरण उत्पाद व्यय ध्रोव्य
२ अग्रयानी पूर्व ९६००००० छेआनवेलाख सुनय कुनय द्रव्यदिक का वर्णन
३ विर्यानु कट ७००००००० सत्तर लाख आत्मनिक्षित्रे विर्यादिव का कथन
४ आस्ति नस्ति ६०००००० जीवादिक का स्वरूप अस्तिना का वर्णन
५ ज्ञान प्रवाद एक कोड़ि एक कम आठ ज्ञान का लक्षण फल का वर्णन
६ सत्य प्रवाद १००००००६ एक कोटिछ नाना प्रकार वचन बोलने का भेद वर्ण्न
७ आत्मप्रवाद ३६००००००० छत्तीसकोड़ि आत्मा कि स्तुति निश्चय व्यवहार का वर्णन
८ कर्म प्रवाद १८०००००० कर्म के उदय वैदिक का व.
९ प्रत्यारवान प्र. ८४००००० बल विधि तप विधि व्रत के फल का वर्णन है
१० विद्यानुवाद प्र ११००००००० अनेक विद्या साधने का व.
११कल्याण प्र. २६००००००० अनेक विद्या साधने का व.
१२ प्राणुवाद प्र. १३००००००० वेदक मंत्र यंत्र भूतेप्रेतादि व.
१३ क्रियाविशाल प्र. ९००००००० संगीत कला चित्र क. व.
१४ त्रिलोकविनु १२५०००००० साडेबारह करोड़ तीनों लोकों का वर्णन है

द्वीप समुद्रों का विवरण मध्यलोक का

सं.	द्वीप समुद्रों के नाम	द्वीप समुद्रों का नाप	द्वीप समुद्रों का विस्तार	सूर्य चन्द्रमाओं की संख्या
१	जम्बूद्वीप	१०००००	योजन बड़ा ताके कोस	सूर्य चन्द्र तारा २ २
२	लवण समुद्र	२०००००	योजन दो लाख	सूर्य चन्द्र तारा ४ ४
३	धातकी खण्डद्वीप	४०००००	योजन चार लाख	सूर्य चन्द्र तारा १२ १२
४	कालोदधि समुद्र	८०००००	योजन आठ लाख	सूर्य चन्द्र तारा ४२ ४२
५	पुष्कर द्वीप	१६०००००	सोलह लाख योजन	सूर्य चन्द्र तारा ७२ ७२
६	पुष्कर समुद्र	३२०००००	बत्तीस लाख योजन	गगन आगे नहीं अगर द्वीप में १३२ सूर्य १३२ चन्द्रमा है
७	वारुणी द्वीप	६४०००००	चौसठ लाख योजन	तारों का प्रमाण छयासठ हजार नौसौ पाँच
८	वारुण वर समुद्र		एक कोटि अठाईस लाख योजन	हनर कोग कोड़ि इतना एक चन्द्रमा

		१२८००००००,,		का परिवार है।
९	क्षीर वर द्वीप	२५६०००००	दो कोड़ि छपपन लाख योजन	इसी क्षीर सागर से भगवान् वन अभिसेकहो
१०	क्षीरवर समुद्र		पाँच कोड़ि बारह लाख योजन	
११	घृतवर द्वीप	५१२०००००	दस कोड़ि चौबीस लाख योजन	
१२	घृतवर समुद्र	१०२४००००००,, २०४८००००००,,	बीस कोड़ि अड़तालीस लाख योजन	

विदेह क्षेत्र के १६० देश और भोगभूमि और मध्य लोक के आकृतम चैत्यालय यह सर्व अढाई द्वीप द्वीप के अन्दर में है

१३	इक्षवर द्वीप	४०९६००००००,, चौबीस कोड़ि छेआनवे लाख योजन
१४	इक्षुवर समुद्र	
१५	नंदीश्वर द्वीप	१६३८४००००००,, एक अरब तरेसठ कोड़ि चौरासी लाख इनमें ५२ मन्दिर हैं देवलोग जाते हैं
१६	नंदीश्वर समुद्र	३२७६८००००००,, तीन अरब सत्ताईस कोड़ि अड़सठ लाख

द्वीप समुद्रों के नाम— तीन समुद्र कालोदधि, लवर्णादधि और स्वयं भूरमण इन ही में त्रस जीव है बाकी के और समुद्रों में जल का यही के नीव है त्रस जीव नहीं हैं।

१७	अरुणवर द्वीप	
१८	अरुणवर समुद्र	
१९	अरुण भासवर द्वीप	
२०	कुण्डलवर समुद्र	
२१	कुण्डलवर द्वीप	यहाँ पर भीन्वार अर्कतम चैत्याला है
२२	कुण्डलवर समुद्र	
२३	संखवर द्वीप	
२४	संखवर समुद्र	
२५	रुचिकवर द्वीप	यहाँ पर ४ मन्दिर हैं रूचिकवासनी देवी का नि.
२६	रुचिकवर समुद्र	चार मन्दिर हैं रुचिकवासनी देव यहाँ रहती है
२७	भुजंगवर द्वीप	
२८	भुजंगवर समुद्र	

२९ कुसंगवर द्वीप
३० कुसंगवर समुद्र
३१ क्रोचवर द्वीप
३२ स्वयं भूरमण समुद्र

ज्योतिष चक्र का विवरण

पृथ्वी से सूर्य चन्द्रमा तारों का कितना कितनी दूर का वि.

पृथ्वी तल से ७८० योजन ऊँचा तारा मण्डल है, सो सब ज्योतिषी देवों के नीचे है पृथ्वी से नौ सौ योजन तक ज्योतिष् चक्र कि हद है। समस्त ज्योतिष चक्र सात सौ नब्बे योजन से लेकर नौ सौ योजन तक ज्योतिषी देवों का लोक है, सो एक सौ दस योजन ज्योतिष् देवों की धरा का दल है यहाँ से ७९० योजन तो तारा मण्डल है तारा मण्डल से दस योजन ऊँचा सूर्य मण्डल है सो वहाँ से ८०० योजन है और सूर्य से ८० योजन ऊँचा चन्द्र मण्डल है सो यहाँ से ८८० योजन है और चन्द्र मण्डल से चार योजन नक्षत्र मण्डल है सो यहाँ से ८८४ योजन है और नक्षत्र मण्डल से चार योजन ऊँचा बुध का विमान सो यहाँ से ८८८ योजन है

सूर्य चन्द्रमा तारों के विमान की ऊँचाई का प्रमाण

तारों का विमान
सूर्य का विमान
चन्द्रमा का विमान
नक्षत्र का विमान
बुध का विमान
शुक्र का विमान
बृहस्पति का वि.
मण्डल का विमान
शनिश्चर का वि.

विमानों में ज्योतिष देवों का निवास स्थान है आयु पूर्ण होने से वे लोग भी दूसर जगह जन्म लेते हैं उस विमान से दूसरे देव जन्म लिया करते हैं विमान बराबर वही रहता है

योजन का कोश बनाकर लिखो पृथ्वी से जितना दूर विमान है तिस का प्र.

७९०	१५८००००	पन्द्रह लाख अस्सी हजार और बुध से ऊँचा तीन योजन शुक्र का
८००	१६०००००	सोलह लाख कोटि विमान है सो यहाँ से ८९१ योजन है
८८०	१७६००००	सतरह लाख साठ हजार और शुक्र से तीन योजन ऊँचा बृहस्पति

८८४	१७६८०००	सतरह लाख अड़सठ हजार	का विमान है सो यहाँ से आठसौ चौरानवे
८८८	१७७६०००	सतरह लाख छेहतर हजार	योजन है और बृहस्पति से तीन योजन
८९१	१७८२०००	सतरह लाख बयासी हजार	ऊँचा मंगल का विमान है सो यहाँ से नौसौ
८९४	१७८८०००	सतरह लाख अठासी हजार	आठ सो सत्यानवे योजन है और
८९७	१७९४०००	सतरह लाख चौरानवे हजार	मंगल से तीन सौ योजन ऊँचा
	शनिश्चर		
९००	१८०००००	अठारह लाख कोटि	का विमान है सो यहाँ से नौ सौ योजन है।

चन्द्रमा का विमान अठारह सो कोश चौड़ा है १८००
सूर्य का विमान सोलह सौ १६० कोश चौड़ा है ग्रहनक्षत्र तारों का विमान सवा सौ १२५ से लगा शापू०० कोश तक है

इसी भाँति सात सौ नब्बे योजन से लगा इन ९०० योजन तक ज्योतिष्य चक्र की रचना है तिसका कोस भी जोड़ कर विख दिया गया है सो मालुम करना—

शील के अठारह हजार दोषों का विवरण

शील की दो प्रकार प्ररुपणा है— एक तो स्वद्रव्य परद्रव्य की विभाव अपेक्षा है और स्त्रियों के संसर्ग अपेक्षा है। तहाँ पर द्रव्य का संसर्ग मन वचन काय करि होय है और कृत कारित अनुमोदना कर होय सो न करणां इनके परस्पर गुणे नवभेद होय बहुरि अहार भय, मैथुन, परिग्रह यह चार संज्ञा हैं इन कर पर द्रव्य का संसर्ग होय है ताकान होना याने नव भेदन को चार संज्ञातै गुणे छतीस हुए बहुरि पाँच इन्द्रियन के निमित्त से विषियन का संसर्ग होय है तिन की प्रवृत्ति का अभाव रूप पाँच इन्द्रियन को छत्तीस कर गुणे एकसौअस्सी होय हैं। बहुरि पृथ्वी, अप, तेज, वायु प्रत्येक साधारण यह एकेन्द्रीय और द्वेन्द्रीय तेइन्द्रीय पंचेन्द्रीय ऐसे हम भेद रूप जीवन का संसर्ग इनकी हिंसा रूप प्रवृत्ति से परिणाम विभाव रूप होय है सोन करणा ऐसे एक सो अस्सी भेदन को दसकर गुणे अठारह सौवहोय बहुरि क्रोधादिक कषाय और असंयम परिणाम संपर द्रव्य सम्बन्धी विभाव परिणाम होय है। तिनके अभाव रूप दृसलाक्षणधर्म तितने गुणे अठारह हजार होय है। तिनके अभाव रूप दृसलाक्षणधर्म तितने गुणे अठारह हजार होय है ऐसे पर द्रव्य के संसर्गरूप कुशल के अभाव रूप—शील के अठारह हजार भेद होय है। इनको पाले परम ब्रह्मचर्य होप है।

बहुरि स्त्री के संसर्ग की अपेक्षा ऐसे हे स्त्री दो प्रकार एक चेतन और अचेतन अचेतन स्त्री काठ पाषान और चित्राम वह तीन मन और काय इन दो का संसर्ग होय बहुरि कृत कारित अनुमोदना गहतीनो से गुणे अठारह होय बहुरि पाँचइन्द्रीयन कर गुणे नव्वे होय बहुरि द्रव्य भाव को गुणे एक सौ अस्सी होय बहुरि क्रोध मान माया और लोभ यह चार कषाय कर गुणे सातसौबीस होय बहुरि चेतन स्त्री देवी, मनुष्यणी, तिर्पचणी, सेऐ तीनों मन वचन काय से गुणे नव होय तिनको करित कारित अनुमोदना कर गुणे सत्ताईसहोय तिनको पाँचइन्द्रीयन कर गुणे एक सौ पैंतीस होय जिनको द्रव्य और

भाव कर गुणे होय से सत्तर सोय तिनको चार संज्ञा कर गुणे एक हजार अस्सी होय इनको अनन्तानुबंधादि सोलह कषायो से गुणे सतरह हजार दोयसौअस्सी होय हैं १७२८० और अचेतन के ७२० दोनों मिलाये १८००० अठारह हजार यही शील स्त्रियों के संसर्ग से दोष का विकार होय ते कुशील जानना।
इति

मोक्ष प्राप्ति का उपाय क्या है— बताइये,

उत्तर—भेद ज्ञान के बल से अपने आत्मा का अनुभव करना।।

अब यह जानना चाहिए कि भेद ज्ञान किस को कहते हैं आत्मा का असली स्वभाव अलग है अनात्मा का स्वभाव अलग है इस ज्ञान को भेद विज्ञान कहते हैं जब सम्यग्दर्शन रूपी गुण आत्मा में प्रकासमान होता है तब यह भेद विज्ञान यथार्थ होता है तब ही स्वानुभव होता है, अनन्तानुवंधीकषाय और मिथ्यात्व के उपशम होने से अनादि कालीन मिथ्या दृष्टि को सम्यक्त हो जाता है उसके कारण दो हैं या तो स्वयं बिना उपदेश के जाति स्मरण से वेदना को अनुभव करते हुए व देव विभूति देखकर व स्मव सरण व मूर्ति देख कर इत्यादि कारणों से होता है या आत्मज्ञानी के उपदेश व शास्त्राभ्यास से होता है। जिसको स्वानुभव होता है उसका ज्ञान बड़ा ही निर्मल होता है जैसे दर्पण में पदार्थ जैसे हैं वैसे झलकते हैं परन्तु दर्पण उनसे विकारी व अन्य रूप नहीं होता जैसा का तैसा बना रहता है तैसे स्वानुभवी के ज्ञान में अन्य द्रव्यों के गुण यद्यपि जैसे के तैसे झलकते हैं; परन्तु वह ज्ञानी उनसे राग द्वेष मोह नहीं करता है। अपने स्वच्छ वीतराग स्वभाव को भिन्न ही अनुभव करता है। व्यवहार में कार्य करते हुवे राजपाट करते हुवे भी भरत चक्रवर्ती की तरह अन्तरंग मन को नहीं जोड़ता है।

यह बात ध्यान में सदा ही रखनी चाहिए कि मुक्ति का साधन इस जाति का है कि इसके साधन करने से उसी समय सुख वो शान्ति का लाभ होता है तथा कर्मों की निर्जरा हो जाती है तथा बहुत से कर्म प्रकृतियों के आश्रय का विरोध होता है। ऐसा सुन्दर साक्षात सिद्धि देने वाला उपाय यह है पहिले हम षट द्रव्यों को अच्छी तरह पहिचाने अर्थात् अलग अलग जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकास, काल का स्वरूप जाने शुद्ध द्रव्यार्थिकालय इनके स्वरूप का मनन करें तो वही हमें अलग अलग स्वभाव मालूम होगा और तब ही और को कुछ का कुछ समझलेगा भ्रम मिटेगा उसी समय ही हम इन बातों का मतलब समझेंगे जैसा हम व्यवहार में कह दिया करते हैं कि हम क्षत्री हैं, पचेन्द्री हैं, रोगी हैं, बलवान हैं, सेठ हैं, रागी हैं, भयवान हैं, क्रोधी हैं शोकाकुल हैं, दु:खी हैं सुखी हैं, हमारी समझ में ऐसा कहना सव व्यवहार है क्योंकि आत्मा का स्वभाव इननामों के कहलाने योग्य नहीं है। आत्मा तो शुद्ध ज्ञान, दर्शन स्वभाव मयी क्रोधादिक विकार व शरीर इन्द्रीय आदि पौद गलीक सम्बन्धों से बिलकुल रहित है उसके साथ जो कर्मों का सम्बन्ध है उसी के कारण से शरीर इन्द्रिय आदि व क्रोध, मान, माया, लोभ, भय, शोक, आदि विकारों का झलकाव होता है ये सब अवस्थाएँ पुद्गल की हैं आत्मा की नहीं हैं इस तरह छ: द्रव्यों से हमारी आत्मा भिन्न है, धर्म द्रव्य हमारी आत्मा से भिन्न है, अधर्म द्रव्य भिन्न है, आकाश द्रव्य भिन्न है, काल द्रव्य भिन्न है और पुदगल द्रव्य आत्मा से भिन्न है और हमारी आत्मा से अन्य की आत्मा भिन्न है इस तरह पर जब आत्मा की सत्ता स्वतन्त्र सर्व

अन्य आत्माओं से निराली मालूम हो जाती है व उसका स्वभाव शुद्ध ज्ञानानन्द मयी झलक जाता है तब दोनों का अर्थात् आत्मा और अनात्मा का भेद विज्ञान हो जाता है इस भेद विज्ञान के एक दफे होने मात्र से कार्य कि सिद्धी नहीं होती। किन्तु उसी की भावना बार–बार करनी चाहिए अर्थात् चिरकाल तक अपने आत्मा के स्वरूप की भिन्नता का अलग अलग विचार करते रहना चाहिए।

भावार्थ– जब हमारे परमपूज्य आचार्यों ने द्रव्यार्थिकनय और पर्यायार्थिकनय से आत्मा का और अनात्मा का भिन्न–भिन्न स्वरूप बता दिया तब कौन ऐसा मूर्ख है जिसके हृदय में भेद ज्ञान पैदा न होवे और स्वानुभव की प्राप्ति हो जावे जैसे किसी के घर में निधि गड़ी थी उसको पता न था, किसी जानकार ने दया करके उसका पता बता दिया तब वह क्यों नहीं खोद कर अपनी निधि को देखेगा वह पाकर प्रसन्न होगा? इसी तरह श्री गुरु के द्वारा समझाये जाने पर अवश्य आत्मा का सच्चा स्वरूप हृदय में झलक जायगा तब यह स्पष्ट रूप से अनुभव होगा कि मैं एक शुद्ध परम ज्ञान ज्योति मय अविनासी आत्मा द्रव्य हूँ।

इति।

संसा के जीवों कि संख्या और आयु कायादि का विवरण

जीवों की संख्या उत्कृष्ट आयु शरीर का रूप

श्लोक– मणुयादो णेरदया णेरइयादो असंख्य गुण गुणिया
सव्वे हवन्ति देवा पते श्रवण प्फदी तत्तो।।

भावार्थ– मनुष्य तैं नार की असंख्यात गुणे हैं और–नारकीन तैं सर्व देव असंख्यात गुणे हैं, देवनतै प्रत्येक वनस्वति जीव असंख्यात गुणे हैं। पंचेन्द्रीय, चौइन्द्रीय, तैइन्द्रीय, वेइन्द्रीय ये लब्ध पयप्तिक जीव संख्याकर विशेषाधिक हैं कि छू अधिक को विशेषाधिक कहिये सो ये अनुक्रमतैवधते २ हैं। पृथ्वीकाय, अपकाय, तेजकाय, वायुकाय इन सर्व में असंख्याते जीव हैं। तिनमें सर्व से थोड़े जीव अग्निकाय में हैं। सो भी असंख्यात– लोकन के जेते प्रदेश होय ते ते जानना। सोही बताइये हैं एक सूच्यांगुल क्षेव प्रमाण, एक प्रदेश सूची मैं केते प्रदेश हैं, सुनो। असंख्यात सागर के जेते समय होय ते ते प्रदेश जानना। एक अंगुल के क्षेत्र के ऐते प्रदेश होय तो हाथ भर के केते होय? तो एक कोस में केते होंय तो सर्व लोक के केते होंय सो ऐसे ऐसे असंख्यात लोक के जेते प्रछो होंय ते ते तेज काय के जीव जानना। ये सबसे थोड़े हैं और तेज काय के जीवों से असंख्याते अधिक पृथ्वीकाय के जीव हैं और पृथ्वीकाय के जीव से असंख्याते अपकाय हैं और अपकाय तैं असंख्याते अधिक वायुकाय हैं और वायुकाय तैं असंख्याते अधिक प्रत्येक वनस्पति काय हैं प्रत्येक वनस्पति तैं तथा सर्व जीवराशि तैं अनन्तगुणे साधारण वनस्पति के जीव हैं इन ही पंचस्थावर में सूक्ष्म और बादर दोय भेद हैं। तहाँ आश्रम बिना उपजै, आयुअन्त बिना मरे नारि काहू से रुक न सके सो सूक्ष्म है और पर कोरो के परते आप रुके सस्त्रादिक तैं घातयावे सहायते उपजे सो वादर जीव है सो वादर चार स्थावरन में असंख्याते

हैं वादर से असंख्यात गुणे सूक्ष्म हैं। और साधारण में वादर अनन्त हैं ताते अनन्त गुणे सूक्ष्म साधारण हैं। और वे इन्द्रीय तैं, लेइन्द्रीय, चौइन्द्रीय, पचेन्द्रीय, वतिर्यचराशि असंख्यात: असंख्यात है और कर्मभूमि के मनुष्य सर्व संख्यात हैं। ऐसे जीवद्रव्य अपेक्षा कथन है अब षटकाय के जीवन के शरीर का आकार कटिए है तहाँ पृथ्वी काय के जीव का आकार मसूर के समान है। और अपकाय के जीव का आकार जलबिन्दु के समान है। और तेज काय का आकार सुई के नोक समान है। और पवनकाय के जीवन का आधार ध्वजा समान है। और वनस्पतिकाय के जीवों का आकार अनेक प्रकार है। और वेइन्द्रीय, तेइन्द्रीय, चौइन्द्रीय जीवों का आकार अनेक प्रकार है। इतिषट शरीराकार आगेषट काय की आयु पृथ्वी के भेद दो एक नरम एक कठोर। पीली मट्टी, गेरू, खल्नी वगैरह नरम पृथ्वीकाय है इसकी उत्कृष्ट आयु बारह हजार वर्ष है और हीरा रत्न पाषाणादि कठोर पृथ्वी की बाईस हजार वर्ष है और जलकाय की उत्कृष्ट आयु तीन हजार वर्ष है और वन्सपति को उत्कृष्ट आयु दसहजार वर्ष है। और जल के जोक, गिंडोला, लट, बाहरवादि वे इन्द्रीय जीवन की उत्कृष्ट आयु बारह वर्ष की है। चींटी खटमल कुंथवादि ते इन्द्री जीवन की उत्कृष्ट आयु उनचास दिन की है। और चौइन्द्री मक्खी भौंरा टिड्डी वगैरह की उत्कृष्ट आयु छै मास की है और असैनी पंचेन्द्रीय की आयु कोड़ि पूर्व वर्ष की जानना और सैनी पचेन्द्री विषे देवनारकी की उत्कृष्ट आयु तैंतीस सागर है और उत्कृष्ट भोगभूमियाँ मनुष्य निर्पच की आयु तीन पल्य की है। और कर्म भूमियाँ मनुष्य तिर्पच की उत्कृष्ट आयु कोड़ि पूर्व वर्ष प्रमाण है और देवनारकी की जघन आयु दस हजार वर्ष की है। और मनुष्य तिर्पचन की जधन आयु अन्तर्मुहर्त है। इति षटकाय जीव के शरीर का रूप और आयु और संख्यादिका विवरण समाप्तम्

अथ अकृत्रम चैत्यालयों कि संख्या विवरण

अधोलोक के चैत्या भवनवासी देवों के भ.	**सं. अंक में**	**स्थानों के नाम**	**सं. अंक में**
असुर कुमार	६४००००० चौसठ लाख	मानुश्योतर	४ चार
नाग कुमार	८४००००० चौरासी लाख	कुण्डलगिर	४ चार
हेम कुमार	७२००००० बहत्तर लाख	इष्वाकार	४ चार
विद्युत कुमार	७६००००० छहत्तर लाख	रुचिकवर दी.	४ चार
सुपर्ण कुमार	७२००००० बहत्तर लाख	नन्दीश्वर दी.	५२ बावन
अग्नि कुमार	७६००००० छहत्तर लाख	सर्व जोड़	४५८ चारसौ
वात कुमार	७६००००० छहत्तर लाख	उर्द्व लोक सम्बन्धी	अठावन
उदधि कुमार	७६००००० छहत्तर लाख	सौधर्म स्वर्ग	चैल्यालय
दीप कुमार	७६००००० छहत्तर लाख	ईशान–२	३२००००० बत्ती
दिक कुमार	९६००००० छहत्तर लाख	सनत कुमार	सलाख
सर्व जोड़	७७२००००० सात करोड़ बहत्तर ला.	महेन्द्र ४	२८००००० अठाई सलाख
मध्य लोक	सम्बन्धी चैत्यालय	व्रत्म ५, ब्रह्मोत्तर	१२००००० बारह

पंचमेरू पर	८० अस्सी	६	लाख
गजदंत पर	२० बीस	लंतव ७, कापिष्ट	८००००आठला
कुलाचल पर	३० तीस	८	ख
विजयार्द्ध पर	१७० एकसौ सत्तर	शुक्र ९ महा शुक्र	४००००चारलाख
		१०	ा
सुर दुर्मनपर	१० दस	सतार ११, सहस्त्रार	५०००० पचास
वक्षारगिर	८० अस्सी	१२	हजार
		आणन १३, पाणन	४००००चालीस
स्थानों के नाम	संख्या अंक	१४, आरण १५,	हजार
		अच्युत १६	६०००छैहजार
उपरगिरिवक	९१ इकानवे	प्रथामग्रिवेक	७००सातसौ
पचपचोतरा	५ पाँच	मध्यमगिरिवेक	एकसौग्यारह
सब जोड़	८४९७०२३		१०७ एकसौ सात

तीनों लोक के सर्व चैत्यालय आठ करोड़ छपपनलाख सतानवे हजार तेईस ८५६९७०२३
इन तीनों सर्व चैत्यालयों में एक सौ आठ—आठ प्रतिमाएँ विराजमान हैं
सब प्रतिमाओं की संख्या ९२५५३२७९४८ नौ अरब पच्चीस करोड़ तरेपनलाख सताईसहजार नौसौ अड़तालीस इतनी सर्व प्रतिमाएँ चैत्यालयों में विराजमान हैं इनके सिवाय और व्यतर देवो के विमानों में असंख्यात चैत्याले हैं और ज्योंतिष्य दोनों के विमानों में भी असंख्यात मन्दिर है इसी भाँति अकृत्रिम चैत्यालो का विवरण।

अथ श्रावक की ५३ तिरेपन क्रिया

८ आठ मूल गुण, १२ बारह व्रत, १२ बारह तप, १ समता भाव ११ ग्यारह प्रतिमा, ४ दान, ३ तीन रत्नत्रय, १ एक जल छानने की क्रिया १ रात्री भोजन त्याग, इसी भाँति तिरेपन क्रिया श्रावक को है।

श्रावक के आठ मूल गुण— पाँच उदम्बर तीन मकार
श्रावक के बारह व्रत— ५ अणुव्रत, ३ गुणव्रत, ४ शिक्षाव्रत
श्रावक के बारह तप— अनशन, उनोदर, व्रतपरिसंख्यान, रसपरित्याग विविक्त सय्याशन, कायक्लेश, प्रायश्चित, विनय, वैयाव्रत, म्बाध्याय, व्युतसर्ग—ध्यान

श्रावक के ग्यारह प्रतिमा— १ दर्शन प्रतिमा, २ व्रत, ३ सामायक, ४ प्रोषधोपवास, ५ सचितत्याग, ६ रात्रीभूक्तित्याग, ७ ब्रह्मचर्य, ८ आरम्भत्याग, ९ परिग्रहत्याग, १० अनुमतित्याग, ११ उदिष्टत्याग।।

श्रावक के चार दान— अहारदान, औषधिदान, शास्त्रदान, अभयदान, तीन रत्न त्रय— सम्यग्दर्शन, सम्यज्ञान सम्यक चारित्र अभय दान

एक जल छानन क्रिया— विधिपूर्वक जल का छानना

रात्री भोजन त्याग— रात्री में भोजन नहीं करना दिन में ही कर लेना। यही ५३ क्रिया ग्रहस्थ श्रावक की है।

अथ जीवों के पाँच प्रकार भावों के ५३ भेद कौन—कौन

औपशमिक, क्षायक, क्षयापश्मीक, औदियक, पारणामीक।

औपशमीक के दो भेद— सम्यकत्व और चारित्र।

क्षायक भाव के नौ भेद— सम्यकत्व, चारित्र, ज्ञान, दर्शन, दान, लाभ, भोग, उपभोग, वीर्य।

क्षयोपशमाक भाव के १८ भेद— सम्यक्तव, चारित्र, मति, श्रुति, अवधि, कुमति, कुश्रुति, कुअवधि, चक्षु, अचक्षु, केवल दर्शन, दान, लाभ, भोग, उपभोग, वीर्य सयंमा संयम।

औदयिक भाव के २१ भेद— मनुष्य, देव, तिर्यव, नारकी, क्रोध, मान, माया लोभ, स्त्रीवेद, पुरुपवेद, नपुसंकवेद कृष्ण वेद कृष्ण नील कपोत पीतपदम शुक्ल अज्ञान असंयत असिद्वत्व मिथ्यादर्शन।

पारणामिक भाव के तीन भेद— जीवत्व, भव्यत्व, अभव्यत्व।

अथ ग्रहस्थ श्रावक के १७ सतरह यम

१ कुगुरु २ कुदेव ३ कुधर्म सेवा ४ अनर्थदण्ड ५ अघमय व्यापार ५ जुवा ७ मांश ८ मद्य ९ वेश्या १० चोरी ११ परत्रिया १२ हिंसादान १३ शिकार। १४ त्रस की हिंसा १५ स्थूल असत्यअरु १६ अणछाण जल १७ नीशि अहार यह सत्तारह अनर्थ जगमांहि याव जीव करो परिहार।।

अथ ग्रहस्थ श्रावक के १७ सतरह नियम

१ भोजने २ पटरसे ३ पाने ४ कुंकु मादि विलेपने।।
५ पुष्य ६ ताम्बूल ७ गीतेषु ८ वृत्यादौ ९ ब्रह्मचर्य के।।१।।
१० स्नान भूषण ११—१२ वस्त्रादौ १३ वाहने १४—१५ सयानासने।
१६ सचित्र वस्तु संख्यादौ १७ प्रमाणो मज प्रत्यहं।।

भोजन करना, नांच वगैरह हेरयना, स्नान करना, आभूषण पहरना गाड़ी घोड़ा खटीया वगैर पर सयन करना हरितवस्तू इतनी खाउण्य इसी इसी भाँति सनरह चीजों में प्रमाण नित्य करना चाहिए।

अथ श्रावक के २१ उत्तर गुण

१ लज्जावंत २ दयावन्त ३ प्रसन्नता ४ प्रतीतिवंत ५ परदेमाच्छादन ६ परोपकारी ७ सौग्यदृष्टि ८ गुणग्राही ९ श्रेष्टपक्षी १० मिष्टवादी ११ दीर्घ विचारीं १२ दानवन्त १३ सीलवन्त १४ कृतज्ञ १५ तत्वज्ञ १६ धर्मज्ञ १७ मिथ्यातरहित १८ सन्तोषवन्त १९ स्याद्वादभाषी २० अमक्ष त्यागी २१ षट्कर्मप्रवीण यह इक्कीसगुण दातार के जानना।।

अथ दातार के २१ गुण

नवधा भक्ति— १ पात्र को देख बुलाना २ उच्चासन पर बैठना ३ चरण धोना ४ चरणोदक लेना ५ पूजा करना ६ मन शुद्ध रखना ७ वचन विनयरूप ७ शरीर शुद्ध रखना ९ शुद्ध अहार देना।

दातार के सात गुण— १ श्रद्धावान होना २ शक्तीवान होना ३ अलोभी होना ४ दयावान होना ५ भक्तिवान होना ६ क्षमावान होना ७ विवेकवान होना।

दातार के ५ भूषण— १ आनन्द पूर्वक देना २ आदर पूर्वक देना ३ प्रिय वचन कह देना निर्भलभाव रखना ५ जन्म सफल मानना।

यही इक्कीस गुण दातार के जानना।। और दातार के ५ इषणरैं विलम्ब से होकर देना दुर्ववचन कह के देना निरादर करके देना देकर पछताना यह ५ दूषण हैं।।

अथ पंच लब्धि का विवरण

क्षयोपशम, विशुद्धि, देशना, प्रायोग्य और करण, प्रथम क्षयोपशम लब्धि का स्वरूप बताया है। करमो में मैल रूप जो अशुभ ज्ञानावरणादि समूह उनका अनुभाग जिसकाल में समय—समय अनन्त गुण क्रम से घटता हुआ उदय को प्राप्त होता है उस काल में क्षयोपशम लब्धि होती है।।४।।

विशुद्ध लब्धि— पहिली क्षयोपशम लब्धि से उत्पन्न हुआ जो जीव के साता आदि शुभ प्रकृतियों के बंधने का कारण शुभ परिणाम उसकी जो प्राप्ति वह विशुद्ध लब्धि है। अशुद्ध कर्म के अनुभाग घटने से संकलेश की हानि और विशुद्ध परिणामों कि वृद्धि होती हैं।

देशना लब्धि— छहद्रव्य नौपदार्थ का उपदेश करने वाले आचार्य आदि का लाभ यानी उपदेश का मिलना अथवा उपदेश हुवे पदार्थों के धारण करने की प्राप्ति यही तीसरी देशना लब्धि है तुसब्द से नरकादि गति में जहाँ उपदेश देने वाला नहीं हैं वहाँ पर पूर्व भय में धारण कीये हुवे तत्वार्थ के संस्कार केवल में सम्यक दर्शन की प्राप्ति जानना।

प्रायोग्य लब्धि— पूर्वोंक तीन लब्धि वाला जीव हर समय विशुद्धता की बढवारी होने से आयु के बिना सात करमों कि स्थिति घटता हुआ अन्त: कोड़ा कोड़ी मात्र रक्खे और करमों के फल देने की

शक्ति को भी कमजोर कर दे ऐसे कार्य करने की योग्यता की प्राप्ती को प्रायोग्य लब्धि कहते हैं यह चारों लब्धियाँ सामान्य रीति से भव्य और अभव्य दोनों जीवों को हो सकती हैं।

करण लब्धि— करण लब्धि उसी जीव को प्राप्त होती है जो सम्यक्तव होने के सनमुख ही जाय उस अन्त कोडा कोडी सागर के स्थीति बंध से पल्का संख्यातवाँ भाग घटाता हुआ स्थीतिबंध अन्तर मुहूर्त तक समानतालिये हुवे करता है। फिर उससे पल्य के संख्यात वे भाग घटाता स्थीति बंध अर्तमहुर्त तक रहता है इस तरह क्रम से संख्यात स्थीति बंधाप सरणों पर पृथकत्व सौ सागर घटने से पहिला पृवृति बंधाप सरण स्थान होता है फिर उसी क्रम से उससे भी प्रथकत्व सौ सागर घटने से दूसरो प्रकृति बंधाप सरण होता है इस तरह प्रकृति बंधाप सरण के चौतीस स्थान होते हैं।

अथ प्रश्नोत्तर वारहमाशा वज्रदंत चक्रवर्ति का पिता पुत्र सम्वाद लिख्यते

।।सवैया।।

बैठे वज्रदंत राय अपनी सभा लगाय ताके पास बैठे राय बत्तीस हजार हैं। इन्द्र कैसे भोग सार राणी छयाणवे हजार पुत्र एक सहस्र महान गुणकार है। जाके पुण्य प्रचण्ड से नये हैं बलवंत शत्रु हाथ जोड़ मान छोड़ सवै दरबार है। ऐसो काल पाय माली लायो एक डाली तो में देखो अलि अम्बुज मरण भयकार है। यहाँ यह भोग मद्दा पाप को संयोग देखो डाली में कमल तामें भौंरा प्राण हरे हैं। नाशिका के हेतु भयो भोग में अचेत सारी रैन के कलाप में बिलाप इन करे हैं। हम तो हैं पाँचो ही के भोगी भये जोगी नांहि विषय कषाय के जाल मांहि परे हैं जौन अबहित करूँ न जाने कौन गतिपरूँ। सुतन बुला के यों वच उचरे है।।४।। अहो सुत जग रीति देख के हमारी नीति भई है उदास वनोवास अनुसरेगे। राज भार सीस धरो परजा का हित करो। हम कर्म शत्रुन की फोजन सूँ लरेंगे। सुनत बचन तब कहत कुमार सब। हम तो उगाल कूँ न अंगीकार करेंगे। आप बुरो जान छोड़ो हमे जग जाल वोड़ो तुमरे ही संग पंच महाव्रत धरेंगे।।

येही भावना बार—बार बने तो क्यों न बेड़ा पारें। —गुलाब

वी. नी. सं. चाद्रवाड़ घरछोड़ चलाईसरी (२४०० सोभे) पारसनाथ पर आथा

।।चौपाई मिश्रित गीताछंद।।
।। पिता का पुत्र को प्रश्न।।

सुन अषाढ आयो पावस काल, सिर पर गरजत यम विकराल।।
लेहु राज सुख करहुं विनीत, हम वन जाँय बड़न की रीति।।६।।
जांय तप के हेतु वन को भाग तज संयम धरें।
तज ग्रन्थ सब निग्रन्थ हो संसार सागर सों तरें।।

यही हमारे मनवशी तुम रहो धीरज धारके।
कुल अपने की रीति चालो राजनीति विचार के।।७।।

।।पुत्र का उत्तर।।

पिता राज तुम कीनो वौन। ताहि ग्रहण हम समर्थ हौन।
यह भौंरा भोगन की व्यथा। प्रकट करत कर कंगन यथा।।८।।
यथा कर का कांगना सन्मुख प्रगट नजराय रे।
त्यौंही पिता भौंरा निरखि। भव भोगतै मन थर हरे।
तुमने तो वन के वास ही का सुख अंगी कृत किया।
तुमरी समझ सो समझ हमरी हमें नृप पद क्यों दिया।।९।।

।। पिता का प्रश्न।।

श्रावण पुत्र कठिन वनवास। जल थल शीत पवन के त्रास।।
जे नहीं पले साधु आचारा। तो मुनि भेष लजावैं सारा।।१०।।
लाजे श्री मुनि भेष ताते देह का साधन करो।
सम्यक्त–युक्त व्रत पंच में तुम देश व्रत मन में धरो।।
हिंसा असत्य चोरी परिग्रह ब्रह्मचर्य सुधार के।
कुल अपने की रीति चालो राजनीति विचार के।।११।।

।। पुत्र का उत्तर।।

पिता अंग यह हमरो नांहि। भूख प्यास पुदगल पर छाहि।।
पाय परिवह कबहुन भजै। धर सन्यास मरण तन तजै।।१२।।
सन्यास धर तन तजे नाहिं। डंस मंसक से डरैं।
रहैं नग्न तन वनखण्ड में। जहाँ मेघ मूसल जल परैं।।
तुम धन्य हो बड़ भाग तज के राज तप उद्यम किया।
तुमरी समझ सो समझ हमरी हमें नृप पद क्यों दिया।।१३।।

।। पिता का प्रश्न।।

भादो में सुत उपजे रोग। आवें याद महल के भोग।।
जे प्रमाद वस आसन टले। तोन दया व्रत तुम से पले।।१४।।
जब दया व्रत नहीं पले तब उपहास जग में विस्तरै
अर और निग्रन्थ की कहो कौन फिर सरधा करै।
तातै करो मुनिदान पूजा राज काज सम्भाल के।
कुल अपने की रीति चालो राजनीति विचार के।।१५।।

।। पुत्र का उत्तर।।

हम तजि भोग चलेंगे साथ। मिटे रोग भव भव के तात
समता मन्दिर में पग धरें। अनुभव अमृत सेवन करें।।१६।।
करें अनुभव पान आतम ध्यान वीणां कर धरें।
आलाप मेघ मल्हार सोहं सप्तभंगी स्वर भरें।।
धृग धृग परवा वज भोग कूँ सन्तोष मन में कर लिया।
तुमरी समझ सो समझ हमरी हमे नृप पद क्यों दिया।।१७।।

।। पिता का प्रश्न।।

आसोज भोग तजे नहीं जाय। भोगी जीवन कोऽस खाय।।
मोह लहर जियकी सुधहरे। ग्यारह गुण थानक चढि गिरे।।१८।।
गिरे थानक ग्यारहवें से आनि मिथ्या भे परे।
विन भाव की थिरता जगत में चर्तुगति के दुख भरे।।
रहैं द्रव्य लिंगी जगत में विन ज्ञान पौरुष हारि के।
कुल अपने की रीति चालो राजनीति विचार के।।१९।।

।। पुत्र का उत्तर।।

विषे विडार पिता तिन कसे। गिर कन्दर निर्जन वन बसे।।
महामन्त्र को लखि पर भाव। भोग भुजंगन घाले घाव।।२०।।
याने न भोग भुजंग तव क्यों मोह की लहरा चढे।
पर मोह तजि परमात्मा प्रकाश जिन आगम पढे।।
फिर काल लब्धि उद्योत होय। सुहोय यों मन थिर किया।
तुमरी समझ सो समझ हमरी। हमें नृप पद क्यों दिया।।२१।।

।। पिता प्रश्न।।

कातिक में सुत करैं विहार। कांटे कांकर चुभे अपार
मारें दुष्ट खैंच के तीर। फाटे उर थर हरे शरीर।।२२।।

थरहरे सगरी देह अपने हाथ काटत नहीं बने।
नहि और काहू से कहें तब देह की थिरता हने।
कोई खैंचि वांधे थम्भ सो कोइ खाय आंत निकाल के
कुल आपने की रीति चालो राजनीति विचार के।।

।। पुत्र का उत्तर।।

पद पद पुष्प धरा में चलें। काहे पाप सकल दलमले
क्षमा ढाल तल धरें शरीर। विफल करें दुश्मन के तीर।।२४।।
कर दुष्ट जन के तीर निरफल दया कुंजर पर चढ़ें
तुम संग समता खड़ग लेकर अष्ट कर्मन से लड़े।
धन्य धन्य यह दिनवार प्रभु तुम योग का उद्यम किया।
तुमरी समझ सो समझ हमरी हमें नृप पद क्यों दिया

।। पिता का प्रश्न।।

अगहन मुनी तटनी तटरहें। ग्रीषम शैल शिखर दु:ख सहैं।
पुनि जब आवत पावस काल रहैं साथ जन वन विकराल।।२६।।
रहें वन विकराल में जहाँ सिंह स्यार सतावही।
कानों में वीछी विल करे और व्याल तन लिपटा वही।
दे कष्ट प्रेत पिशाच आन अंगार पाथर डारके।
कुल आपने की रीति चालो राज नीति विचार के।।२७।।

।। पुत्र का उत्तर।।

हे प्रभु बहुत वार दु:ख सहे। बिना कवली जाय न कहे।
शीत उष्ण नर्कन के ताता। करत याद कम्पे सब गान।।२८।।
गात कम्पे नर्कसे लहे शीत उस्ण अथाय ही।
जहाँ लाख योजन लोह पिण्ड सुहाय जल गलजाय ही।
असि पत्र वनके दु:ख सहे परवसु स्ववश तप ना किया।
तुमरी समझ सो समझ हमरी हमें नृप पद क्यों दिया।।२९।।

।। पिता का प्रश्न।।

पोष अर्थ अरू लेहु गयंद। चौरासी लख लख सुख कंद।
कोड़ि अठारह घोड़ा लेहु। लाख कोड़ि हल चलत गिवेहु।।३०।।
लेहु हल लख कोडि षट खण्ड भूमि अरू नवनिधि वडी।
लो देशु की विभूति राशि रत्नन की पडी।
धर देहुं शिर पर छत्र तुमरे नगर घोष उच्चार के।
कुल अपने की रीति चालो राजनीति विचार के।।
राह भूले मुक्ति की वहु वार सुरगति संचरे।
जहाँ कल्प वृक्ष सुगन्ध सुन्दर अप्सरा मन को हरे।
उदधि पी नहीं भया तिरपत ओस पी के दिन जिया
तुमरी समझ सो समझ हमरी हमें नृप पद क्यों दिया

।। पुत्र का उत्तर।।

अहो कृपा निधि तुम परसाद। भोगे भोगे सवै मरयाद।
अबन भोगन की हमको चाहा। भोगन में भूले शिवराह।।३२।।

।। पिता का प्रश्न।।

माघ सधे न सुरन ते सोय। भोग भूमीयन तै नहिं होय।
हर हरि अरू प्रति हरि से वीर। संयम हेत धरे नहीं धीर।।३४।।
सयंम कू धीरज नहीं धरे नहीं टरे रण में युद्ध सूं।
जो सत्रु गण गजराज कूँ दलमले पकड़ बिरूद्ध सूं।
पुनि कोट सिल मुग्दर समानी देय फेंक उखार के।
कुल आपनें की रीति चालो राजनीति विचार के।।३५।।

।पुत्र का उत्तर।।

वंध योग उद्यम नहीं करें। ये तो तात कर्म फल भरें।
वांधे पूर्व भव गति जिसी। भुगतै जीव जगत में तिसी।।३६।।
जीव भुगते कर्म फल कहो कौन विधि संयम धरें।
जिन बंध जैसा वांधियो तैसा ही सुख दुःख सो भरें।
यों जान सव को बंध में निर्वध का उद्यम किया।
तुमरी समझ हमरी हमें नृप पद क्यों दिया।।३७।।

।। पिता का प्रश्न।।

फाल्गुण चाले शीतल वायु। थरहर कम्पे सब की काय।
तब भव वंध विहारण हारा। त्यागैं मूढ महां व्रत सारा।।३८।।
सार परिग्रह व्रत विसारें अग्नि चहुँ दिशि जा रही।
करें मूढ शीत विनीत दुर्गती गहें हाथ पसार ही।
सो होंय प्रेत पिशाच भ्रतरु उत शुभ गति टार के।
कुल आपने की रीति चालो राजनीति विचार के।।३९।।

।। पुत्र का उत्तर।।

हे मति वंत कहा तुम कही। प्रलय पवन की वेदन सही।
धारी मच्छ कच्छ की काय। सहे दुःख जलचर पथयि।।४०।।
पाय पशु पर जाय परवश। रहे सींग वधाय के।
जहाँ रोम रोम शरीर कम्पे। मरे तन तड़ फड़ाय के।
फिर गेर चाम उचेर स्वान सियार मिल श्रौणित पिया।
तुमरी समझ सो समझ सो समझ हमरी हमें नृप पद क्यों दिया।।४१।।

।। पिता का प्रश्न।।

चैतलता मदवोदय होय। ऋतु वसंत में फूले सोय।
तिन की इष्ट गंध के जोर। जागे काम महा वल फोर।।४२।।
फोर वल को काम जागे लेयमन पुरछी नहीं।
फिर ज्ञान परम निधान हरि के करे तैरा तीन ही।।
इनके न उनके तव रहे। गये कुगती दोउ कर झारिके।
कुल आपने की रीति चालो राजनीति विचार के।।४३।।

।। पुत्र का उत्तर।।

ऋतु वसंत वन में रहे। भूमि मसाण परिषह सहें।
जहाँ नहि हरित काय अंकूर। उड़त निरन्तर अहनिसि धूर।।४४।।
उडे वन की धूर निशिदिन लगे कांकर आयके।
सुन सब्द प्रेत प्रचण्ड के काम जाय पलाय के।
मत कहो अब और कछु प्रभु भव भोग में मन कम्पिया।
तुमरी समझ सो समझ हमरी हमें हनृ पद क्यों दिया।।४५।।

।। पिता का प्रश्न।।

मास वैसाख सुनत अरदास। चक्री मन उपज्यो विश्वास।
अब बोलन को नाही ठौर। मैं कहूँ और पुत्र कहे और।।४६।।
और अब कछु मैं कहुँ नहीं। रीति जग की कीजिए।
एक बार हम से राज लेके चाहे जिसको दीजिए।।
पीता था एक यह मांस का अभिषेक कर राजा कियो।
पितु संग सब जगजाल सेनी निकसवन मारग लिया।।४७।।
उठे वज्र दंत चक्रेश। तीस सहश्रनृप नीज अषवेश।
एक हजार पुत्र बड़ भाग। साठ सहस्र सत जग त्यागा।।४८।।
त्याग जगकूँ वे चले सव भोग तज ममत हरी।
सम भाव कर तिहुंलोक के जीवों से यों वीनती करी।
अहो जेते हैं सब जीव जग में क्षमा हम पर कीजियो।
हम जैन दिक्षा लेत हैं। तुम वैर सब तज दीजियो।।४९।।
वैर सब से हम तजा भगवंत का शरण लिया।
श्री पंचमेष्ठी का शरण में चित दिया।
यों भाषपिहताश्रव गुरु ढिग जैन दिक्षा आदरी।
कर लौंच तजि के सोच सबने ध्यान में दृढ़ता धरी।।५०।।
जेठ मांस लूह ताती चले। सूके सरकपिगण मद गले।
ग्रीष्म काल शिखर के शीश। धरो अतापन योग मुनिस।

धर योग अतापन सुगुरु ने तब शुक्ल ध्यान लगाइयो।
तिहुं लोक भानु समान केवल ज्ञान तिन प्रगटाइयो।
धन्य वज्र दन्त मुनीश जग तजि कर्म के सनमुख भये।
निज काज अरु परकाज करके समय में शिवपुर गये।

।इति सम्पूर्ण।।

अथ श्री मानतुंग स्वामी रचित भक्तामर स्तोत्र के
अड़तालीश श्लोकों का संक्षिप्त अर्थ भाषा लिख्यते—

।१।। प्रथम श्लोक का अर्थ।। भक्तामर प्र.

हे प्रभु आपके चरणों में इतनी ज्योति है कि जिस समय इन्द्र नमस्कार करते हैं उनके मुकटों में जड़े हुए जो रत्न जग मग करते हैं वह चमक उन रत्नों में केवल आपके चरणों कि प्रभाव पड़ने से ही पैदा होती है, हे! भगवान् आपके चरण पापरूपी अंधेरे के नाशक संसार रूपी समुद्र में गिरते हुए प्राणियों को हाथ से पकड़ कर बचाने वाले हैं।

।।२।। द्वीतिय श्लोक का अर्थ।। य: संस्तुत: सकल

समस्त सास्त्रों के तत्त्वज्ञान से उत्पन्न हुई जो बुद्धि उस करके चतुर जो इन्द्र उनक करके तीन लोकों के चित्त को हरने वाले उज्जल स्त्रोतों में जो स्तुति किया गया है उस आदि जिनेन्द्र कि मैं स्तुति करता हूँ।

।।३।। तृतीय श्लोक का अर्थ।। बुद्धा विनपि विवुधा.

देवताओं करके पूजा गया है याद पीठ जिनका सो मैं विना बुद्धि ही के आप का स्तोत्र बनाना चाहता हूँ जैसे पानी में स्थित चाँद को पकड़ना असम्भव है; किन्तु बालक चाँद के प्रति बिम्ब को पकड़ना चाहता है।

।।४।। चतुर्थ श्लोक का अर्थ।। वक्तु गुणान गुण समुद्र

हे गुणों के सागर चाँद के समान मनोहर तेरे गुणों के कहने को बुद्धि से बृहस्पति के तुल्य भी आपके गुणों का वर्णन करने में असमर्थ है। मैं अल्पबुद्धि होकर आपके गुणों का वर्णन करना चाहता हूँ जैसे प्रलयकाल की वायु से उछल रहे हैं नाकुओं के समूह जहाँ ऐसे समुद्र की भुजाओं से कौन तैर सकता है।

।।५।। पंचम श्लोक का अर्थ।। सोहंतथापितव.

हे भगवान् जैसे हिरणी अपने बच्चों के प्रेम कर शेर के सन्मुख निर्भय होकर जाती है, वैसे ही मैं जानता हूँ कि आपके स्त्रोत्र रचने कि मेरे में समर्थ नहीं है तौ भी आपके प्रेम के वशी भूत हुआ। आपका स्त्रोत्र बनाने में तत्पर हुआ हूँ।

।।६।। षष्टम श्लोक का अर्थ।। अल्पंश्रुतं श्रुतावां.

हे प्रभु मैं थोड़ा पढ़ा हुआ विद्वानों के हांसी के स्थान मुझको आपकी भक्ती जो शवरी से बहुत बोलने वाला करती है जैसे वसन्त ऋतु में आम के कोर के प्रीाव से तृप्त हुई कोयलें मीठे मीठे शब्द करती हैं, उसी तरह से आपकी भक्ति धारा प्रवाह स्तुति करने को मजबूर करती है।

।।७।। सप्तम श्लोक का अर्थ।। तूत्संस्तवेन भव संतति.

हे प्रभू जैसे जगत को आक्रमण करने वाला काली रात का अन्धेरा सूर्य कि किरण से फटा हुआ तत्काल नष्ट हो जाता है वैसे ही प्राणियों को जन्म जन्मान्तर से बन्धा हुवा पाप कर्म आपके स्तोत्र से क्षण भर में नाश को प्राप्त होता है।

।।८।। अष्टम श्लोक का अर्थ।। मत्वेति नाथ तव संस्त.

हे भगवान् जैसे कमल पत्र पर पड़ी हुई पानी की बून्द मोती समान भासती है यही मानकर मैंने आपका स्त्रोत्र बनाना शुरू किया है सो यह स्तोत्र सज्जनों के चित्त को हरेगा।

।।९।। नवम श्लोक का अर्थ।। अस्तांतव स्तवनम.

हे प्रभो! दूर कर दिये हैं सकल पाप जिसने ऐसा आपका स्तोत्र तो दूर रहो, आपकी तो कथा ही पापों को दूर करती है। सूरज तो दूर रहो सूरज की कान्ति ही सरोवरों में कमलों को खिलाने वाली कर देती है।

।१०।। दसम श्लोक का अर्थ।। नात्यद् भूतं भूवन भूषण

हे जगत् के भूषण! हे नाथ जगत में वही स्वामी श्रेष्ठ है जो अपने आश्रित को विभूति कर अपने समान बना लेते हैं सो यदि आपको भजते—भजते जो भव्य जीव इस ही दुनियाँ में आपके तुल्य हो जाते हैं इसमें क्या आश्चर्य है।

।११।। ग्यारहवाँ श्लोक का अर्थ।। दृष्टवा भवंत मनिमेषविलोव

हे प्रभो आपके नेत्रों कि पलक कभी नहीं लगती, मनुष्य लोग चाहते हैं। आपकी जैसी मेरी भी आँख बराबर खुली रहे जिससे आपका स्वरूप बराबर देखता रहूँ और चन्द्रमा के समान सोभा वाले क्षीर सागर के दूध को पीकर दूसरे समुदद्र के खारे पानी को कौन पीना चाहता है।

।१२।। द्वादसमा श्लोक का अर्थ।। यै: शांतराग रुचिभि: परमाणु.

हे भगवान् तीन भुवनों के भूषण रूप तुम, शान्त हो गये हैं राग (मोह) अथवा रुचि (इच्छा रहित), जिन परमाणुओं से आपका शरीर बना है वह जगत में उतने ही परमाणु थे यही कारण है आप जैसा रूप पृथ्वी में और दूसरे का नहीं है।

।। १३।। त्रियादसमा श्लोक का अर्थ।। वक्त्रं वाने सुर नरोरग नेत्रहपी

हे भगवान् देवता, मनुष्य और सबों के नेत्रों को हरने वाला आपका मुख कि ज्योति और कहाँ चाँद का प्रतिबिम्ब कलंक से मैला जो कि दिन में पीले पत्ते जो पलास के समान हो जाता है, इस लिए तीन लोक में कोई पदार्थ नहीं है जिसकी उपमा आपके मुख को दी जाय।

।।१४।। चतुर्दसवां श्लोक का अर्थ। सम्पूर्ण मण्डल शशांक कला कला।।

हे भगवान् सम्पूर्ण मण्डल वाले चाँद की किरणों के समूह केस मान सफेद आपके गुण त्रिलोक को उलंघन जाते हैं और सर्व लोकाकाश में व्याप्त हो रहे हैं। उनको कोई भी हटा नहीं सकता इसलिए जो गुण तीन जगत के एक स्वामी को आश्रय करते हैं इच्छा से विचारते हुवे उनको कौन निवारण कर सकता है।

।।१५।। पन्द्रहवाँ श्लोक का अर्थ।। चित्रं किमत्र यदि.

हे स्वामी जैसे प्रलयकाल की वायु सभी पहाड़ों को हिलाती है; परन्तु मेरू को नहीं हिला सकती— तैसे ही इन्द्रादिकों के मन को विकार उपजाने वाली अप्सरा यदि आपको नहीं हिला सकी तो इसमें कोई आश्चर्य नहीं है। क्योंकि आपका मन निष्कम्प है उसे कोई भी कम्पायमान नहीं कर सकता।

।।१६।। षोडसवाँ श्लोक का अर्थ।। निर्धूमवर्तिखर्वित तैलपूर

हे प्रभो दीपक अल्प ज्योति का प्रकाशक और आप त्रिलोकी के प्रकाशक दीपक धूवां तेल और बाती वाला अर्थात् तैल बाती के आश्रय है और धूवां सहित है और हवादिक से बुझ जाता है और आप इनसे रहित सदा हैं दीपमान रहने वाले विलक्षण दीपक हैं।

।।१७।। सतरहवाँ श्लोक का अर्थ।। नास्तं कदाचिद पया.

हे भगवान् आपको सूर्य की उपमा दें तो सूर्य संध्या काल अस्त हो जाता है, अमावस के दिन ग्रहण में राहु से ग्रसा जाता है तथा बादलों के बीच आ जाय तो प्रकाश छिप जाता है यह सब दोष आप में नहीं हैं आप सर्व दोष रहित निर्विघ्न निरन्तर सदा काल तीन लोक को प्रकाशते हैं इसलिए आप उपमा रहित हो।

।।१८।। अष्टादसवां श्लोक का अर्थ।। नित्यदयं दलित मोह.

हे प्रभो चाँद कृष्ण पक्ष में क्षीण होय तथा शुक्ल में बढे और पूर्णमासी को राहु से ग्रसा जाय, यह सर्व दोष कोई भी आप में नहीं सो आपका मुख एक विलक्षण चन्द्रमा है। अर्थात् किसी काल में भी नहीं मन्द होय है ज्योति जिसकी ऐसे आप जगत को प्रकाश करने वाले अद्‌भुत जाति के चन्द्रमा हैं।

।।१९।। उन्नीसवां श्लोक का अर्थ।। किंशर्वरीषु शशिनाहं.

हे स्वामिन आपके मुखरूप चाँद से अन्धेरे के नष्ट हो जाने पर रात में चाँद से और दिन में सूर्य से क्या प्रयोजन है जैसे चावलों का खेत पक जाने पर मेघ का वर्षना अकारथ है वैसे ही जब रात के अन्धेरे को चाँद दूर करता है और दिन में सूर्य अन्धेरे को दूर करता है यदि दोनों वक्तों के अन्धेरे को आप के मुख चन्द्र से दूर हो जाय तो फिर क्या जरूरत है चाँद सूर्य की।

।।२०।। बीसवाँ श्लोक का अर्थ।। ज्ञानं यथात्वषि विभाति. हे जिनेन्द्र जैसा निर्मल ज्ञान भाव में प्रकाशता है वैसे हरि आदि देवों में नहीं। अर्थात् जैसा प्रकाश मणियों में तेज महत्त्व को प्राप्त होता है। वैसे किरणों से व्याप्त काँच खण्ड में नहीं होता। इसलिए जो अखिंडितशान आप में है दीप्यमान है वैसा हरि हरादिकों में नहीं है।

।।२१।। इक्कीसवाँ श्लोक का अर्थ।। मन्येवरं हरिहरादय एव दृष्टा.

हे भगवान् मेरे वास्ते यह बड़ी खुशी की बात है कि मैंने हरि हरादिक देवों को भी देख लिया क्योंकि उनके देखने से आप को वीतराग रूप पहिचान मेरा दिल आप विषेही संतोष को प्राप्त हुआ अब किसी जन्मान्तर में भी मेरे मन को दूसरा कोई हरण नहीं कर सकता।

।।२२।। द्वाबीसवां श्लोक का अर्थ।। स्त्रीणां शतानि शतसो जनयन्ति.

हे भगवान् सैकड़ों स्त्रियें सैकड़ों पुत्रों को जनती हैं; परन्तु दूसरी माता ने तुम्हारे समान पुत्र पैदा नहीं किया। सभी दिशाएँ तारों को धारण करती हैं, लेकिन प्रकाशमान हो रही हैं किरणें जिसकी ऐसे सूर्य को तो पूर्व दिशा ही पैदा करती है।

।।२३।। तेबीसवाँ श्लोक का अर्थ।। त्वामा मंनंति मुनय: परम पुभांस,

हे मुनीश मुनि तुम्हें महान पुरुष कर्म रूपी अन्धेरे के आगे सूर्य समान शुद्ध वरण मानते हैं और आपको भले प्रकार जानकर मृत्यु को जीतते हैं। अर्थात् मोक्ष पद को पाते हैं क्योंकि सिवाय आपके मुक्ति पाने का रास्ता नहीं बता सकता।

।।२४।। चतुर्विसवां श्लोक का अर्थ।। त्वाम व्ययं विभुमचित्यम.

हे प्रभो संतजन आपको अविनाशी, सर्व व्यापक, अचिंत्य, असंख्य, आद्य, ब्रह्मा, ईश्वर, अनन्त, विष्णु, कामशत्रु (शिवा), योगीश्वर इत्यादि अनेक एक ज्ञान रूप अमल शुद्ध कहते हैं।

।।२५।। पच्चीसवाँ श्लोक का अर्थ।। बुद्ध स्तमेव विधुधार्चिन

हे धीर देवताओं कर पुज्जित आप बुद्धि का बोधन करने से शुद्ध हैं तीन लोक के मंगल कर्ता होने से आप ही शंकर हैं मोक्ष मार्ग विविध का निधान बताने से आप ही विधाता हैं और आप ही पुरुषोत्तम कहीं नरों में (श्रेष्ठ) हैं।

।।२६।। षटबीसवाँ श्लोक का अर्थ।। तुभ्यं नमस्त्रि भवनार्ति.

हे भगवान् तीन भवनों के दु:ख दूर करने वाले आपको नमस्कार हो।

हे पृथ्वी में शुद्ध भूषणरूप आपको नमस्कार हो। हे तीन जगत के परमेश्वर आपको नमस्कार हो हे, संसार समुद्र को सुखाने वाले परमेश्वर आप को नमस्कार हो।

।।२७।। सप्तबीसवाँ श्लोक का अर्थ।। को विस्मयोऽत्रयदि.

हे भगवान् समस्त गुणों को और कोई जगह नहीं मिली तब उन्होंने आपका ही आश्रम लिया है सो यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है प्राणी तो निवाण की तरफ ही जावेगा, सो गुण तो गुणी के आश्रयती ठहरेंगे। और दोषों को हर जगह आसरा मिल सकता है इस लिये उन्होंने कभी स्वप्न में भी आपको नहीं देखा आप में सब गुण ही गुण हैं।

।।२८।। अठाबीसमा श्लोक का अर्थ।। उच्चरै शोक तरु

हे प्रभो जैसे सूर्य का प्रतिबिम्ब अन्धकार के समूह को नष्ट करता है वैसे ऊँचे अशोक तरु के पास होने वाला सूर्य शोभता है जैसे ही हे भगवान् भी उतंग अशोक वृक्ष के पास ऊँची किरणों वाला शुद्ध आपका रुप निरन्तर शोभता है।

।।२९।। उनतीसवाँ श्लोक का अर्थ।। सिंहासने मणिमयूख.

हे भगवान् जैसे उदयाचल पर्वत पर सूर्य शोभता है वैसे ही अनेक प्रकार के रत्नोकर जड़ित सिंहासन पर आपका सुवर्ण समान पीतवर्ण शरीर शोभता है। अर्थात् आचार्य ने सुवर्ण के समान सिंहासन पर तिष्ठते हुवे आपको उदयाचल की उपमा दी है।

।।३०।। तीसमा श्लोक का अर्थ।। को विस्मयोऽत्रयदि.

हे भगवान् उदय हो रहे चाँद के समान शुद्ध झरणों की जलधारा वाला सोने के ऊँचे सुमेरु के तट की तरह कुन्द के फूल के समान उज्जल हिलते चम्बरों से हिलते हुए वे शोभा वाला सोने के समान सुन्दर आपका शरीर अत्यन्त शोभित हो रहा है।

।।३१।। इकतीसमा श्लोक का अर्थ।। छत्रत्रयं तव विभाँति.

हे भगवान् जो एक लोक का स्वामी होता है उसके ऊपर एक छत्र होता है आप तीन लोकों के स्वामी हैं इसलिए आपके शिरपर तीन छत्र शोभते हैं इसलिए आचार्य महाराज ने यह बतलाया है के यह मोतियों की लड़ियों से जुड़े हुए तीन छत्र यह बतला रहे हैं के आप तीन लोक के स्वामी हैं।

।।३२।। बत्तीसमा श्लोक का अर्थ।। गम्भीरता रख पूरित दिश्व आप.

हे भगवान् आपके अष्ट प्रतिहार्य में आकाश में बाजा बजता है सो आचार्य बतलाते हैं के जो बाजा दसों दिशाओं को व्याप्त होकर यह बतलाता है के हे जीवों अब तुमको इस संसार के दुखों को दूर करने वाली शुख रूप विभूति मिलेगी और मोक्ष मार्ग पर चलने के लिए धर्म का राज प्रवर्तेगा।

।।३३।। तेतीसमा श्लोक का अर्थ।। मन्दार सुन्दर नमेरु सुपारिजान.

हे प्रभो गन्दा दिक कि बून्दों से पवित्र मन्द मन्द पवन कर के गिराई हुई मन्दार, मनोहर नमेरु श्रेष्ट पारिजान और सन्तानक आदि कल्पवृक्षों के पुष्प समूह को जो दृष्टि वृष्टि आकाश से गिरती है सो आपके वचनों की पंक्ति ही खिरती है।

।।३४।। चौतीसमा श्लोक का अर्थ।। शुम्भत्प्रभाव लय भुरि.

हे प्रभो आपके भामण्डल की ज्योति का इतना तेज है कि तीन लोक में जितने प्रकाश करने वाले सुर्वादी पदार्थ हैं सो सब मन्द भासते हैं। इतना तेजस्वी होने पर भी सोम्य पने में रात्री के चन्द्रमा की शीतलता को भी जीतते हैं।

।।३५।। पैंतीसमा श्लोक का अर्थ।। स्वर्गा पवर्ग गम मार्ग.

हे भगवान् तीन लोक के जितने पदार्थ हैं सर्व का स्वभाव जानने के लिए आपकी ही दिव्यध्वनि है इसी से जीवों को मोक्ष में जाने के लिए सच्चा मार्ग दर्साती हुई सर्व भाषाओं में समझ जाने वाली गुणों करके मिली हुई ध्वनि खिती है।

।।३६।। छत्तीसमा श्लोक का अर्थ।। उन्निद्र देम नव पंकज.

हे भगवान् आपके चरण कमलों की मनोहर किरणों की शिखा से आपके पाँव जहाँ—जहाँ धरे जाते हैं वहाँ—वहाँ देवता कमल रचते हुवे चले जाते हैं और आपके नखों की किरणों की शिखा सुवर्ण के रचे हुवे कमलों की कान्ति को जीतती है।

।।३७।। सैंतीसमा श्लोक का अर्थ।। इत्थं यथा तब विभुतिर भूव.

हे भगवान् जिस प्रकार आपकी दिव्य ध्वनि धर्मोपदेश के विधान में होती है वैसा उपदेश और कोई दूसरे मनावलम्बी देवों में नहीं होता क्योंकि जैसे अन्धेरे को दूर करने वाला प्रकाश सूर्य में होता है वैसा और कोई ग्रहों में नहीं होता।

।।३८।। अड़तीसमा श्लोक का अर्थ।। श्च्योतन्मदा विलवि.

हे प्रभो चाहे कैसा ही भयंकर ऐरावत के तुल्य महा मस्त गदोन्मन्त गजेन्द्र आपके भक्तों के सन्मुख मारने के लिए आवे परन्तु आपके नाम का आश्रय होने से आपके भक्तों को भय नहीं होता।

।।३९।। उनतालीसमा श्लोक का अर्थ।। भिन्नेभ कुम्भगल.

हे भगवान् जो महा भयंकर हस्तियों के मस्तक छेदने वाला जिसे देखते ही मनुष्य काँप उठे ऐसे सेर के पैर में आया हुआ पुरुष कभी भय को प्राप्त नहीं हो सकता।

तथा महा भयानक सिंह जिसने हस्तियों के मस्तक विहारने से सफेद खून नहा के मोती बिखराया है, ऐसे विकराल सिंह को देखकर कुछ भी भय को प्राप्त नहीं हो सकता।

।।४०।। चालीसमा श्लोक का अर्थ।। कल्यान्त काल पवनो.

हे भगवान् प्रलयकाल की पवन कर उडाये हुवे और जिसकी लहरें आसमान तक उठ रही हैं और चारों तरफ से अग्नि फैल रही है ऐसी भयानक अग्नि भी आपके नामरूपी जलते शान्त हो जाती है।

।।४१।। इकतालीसमा श्लोक का अर्थ।। रकक्षेणं समद कोकिल.

हे भगवान् महा भयंकर कालहार विकराल सर्प क्रोध से जिसके नेत्र लाल हो रहे हैं और कोयल के गले के समान नीले कंठ है और अग्नि कि चिनगारी समान निकलता हुवा ऐसा भयानक सर्प फुंकार करता हुवा यदि आपके भक्तों के सन्मुख आवे तो आप का नाम रूपी नागदमणि से जीर नहीं चढ़ सकता।।

।।४२।। बियालीसमा श्लोक का अर्थ।। बल्ग तुरंग गज गर्जित.

हे प्रभो कोई बलवान राजा की फौज घोड़ों को दौड़ता हुव हाथियों को गर्जाता हुवा इस कदर गर्द उड़ाते हुवे जो सूर्य भी नजर न पड़े जिसको देख कर बड़े बड़े राजा लोग कम्पायमान हो जावे ऐसे समय में आपके भक्तों के सन्मुख आई हुई आपत्ति जैसे सूर्य के प्रकाश से अन्धेरा भाग जाता है ऐसे आपके आश्रय से सर्व विघ्न टल जाते हैं।

।।४३।। तेतालीसमा श्लोक का अर्थ।। कुन्ताग्रभिन्न गज शोणिन.

हे भगवान् ऐसे बड़े भारी रण क्षेत्र जहाँ पर फौज का घमासान युद्ध हो रहा हो जहाँ पर खून की नदियाँ बहने लग जावें जिसमें बड़े बड़े योद्धा लोग ऐसे संकट में फँसे हों ऐसे महान भयंकर समय में आपके नाम स्मरण मात्र से युद्ध से विजय प्राप्त कर लेते हैं।

।।४४।। चौवालीसमा श्लोक का अर्थ।। अंभोनिधौ क्षभिन.

हे भगवान् महान गम्भीर समुद्र जिसमें अनेक प्रकार के बड़े बड़े मगरमच्छ और नाकुओं से भरा हो और जिसकी लहरें कोसों तक ऊपर उछल रही हों और बड़वानल अग्नि चल रही हो ऐसे अलंघ्य समुद्र में यदि आपके भक्त गिरजावें तो आपके नाम स्मरणमात्र से तैर कर पार हो जाते हैं

।।४५।। पैंतालीसमां श्लोक का अर्थ।। उद्भूत भीषण.

हे भगवान् आपकी चरणों के रज में इतना गुण है कि छोटे मोटे रोग का तो क्या जिकर बड़े बड़े कठिन भयंकर जलोदर सारिषे असाध्य रोग आजाय जिससे जीवन की आशा न रहे एक आपके चरण कमल की धूलरूप आहत से शरीर में लगाने से सर्व रोग दूर हो कामदेव के समान कंचन वरण शरीर हो जाता है।

।।४६।। छियालीसमा श्लोक का अर्थ।। आपद कंठ.

हे प्रभो आपके नाम मात्र में इतना प्रभाव है जब राजा आदि पांव से गले तक बड़े भारी सांकल से जकड़ कर कोटड़ी में बन्द कर ताले ठोक देते हैं ऐसी कठिन भीड़ पड़ने पर आपके भक्त आपका नाम रुपी मन्त्र का जो स्मरण करते हैं तो अपने आप तमाम बन्धन टूट कर सर्व भय दूर हो जाते हैं।

।।४७।। सनतालीसमा श्लोक का अर्थ।। स्तोत्र तव.

हे भगवान् भक्ति करके आपके गुणों से गुथी हुई अनेक प्रकार रूप विचित्र है फूल जिसमें कंठ में प्राप्त इस स्तोत्र रूप माला को जो पहिन लेगा सो पुरुष मान से ऊँचे उस मनुष्य को मनोवांच्छित फल अर्थात् मुक्ति रूपी लक्ष्मी की प्राप्ति करेगा।।

।। इति भक्ताश्वर स्तोत्र का संक्षिप्त अर्थ पूर्ण।।

अथ उमा स्वामी रचित दस सूत्र जी का संक्षिप्त अर्थ

।। प्रथम सूत्र का अर्थ।।

प्रथम अध्याय में सम्यगदर्शन ज्ञान चरित्र की एकता दिखाय कर मोक्ष मार्ग का निरुपण किया है। तत्वों के अर्थ का श्रद्धान सो सम्यग्दर्शन है। सो निसर्गज स्वत: स्वभाव, अधिगमज गुरु उपदेशादि से दो प्रकार होता है। जीव तत्त्व अजीव आश्रव वंधतत्व सम्बर निर्जरा और मोक्ष तत्त्व ऐसा सप्त तत्त्वों का निरूपण संक्षेप से करके नाम निक्षेप स्थापना निक्षेप भाव निक्षेप और प्रमाणनय से अधिगभज होता है सो दिखाया है और सत असत तत्व संख्या भेद गणना क्षेत्र वर्तमान निवास स्पर्शन त्रिकाल गोचर निवास काल समय की मर्यादा अन्तर विरह काल भाव उपशमकादि अल्य बहुत हीन अधिक और मति श्रुति अवधि मन पर्यय और केवल ऐसे पाँच प्रकार के ज्ञान इत्यादि का वर्णन कर प्रथम अध्याय पूर्ण किया।

।। द्वितीय सूत्र का अर्थ।।

छूसरा अध्याय में जीव तत्त्व का निर्माण है। तहाँ प्रथम ही जीव के औप शमिक आदि भाव पाँच हैं। तिनके तिरेपन भेदों का वर्णन है। आगे जीव का प्रसिद्ध धर्म देख उपभोग कूँ लक्षण कहा। ताके आठ भेद कहे। आगे जीव के भेद कहे। तहाँ संसारी अर मुक्त और संसारीन में संज्ञी असंज्ञी त्रस स्थावर और त्रस के भेद द्वेन्द्रियादिक पंचइन्द्रिय तांइ कहो। बहुरि पाँच इन्द्रियन के द्रव्य इन्द्रिय भाव इन्द्रिय तिन के नाम विषय कहे। बहुरि एक इन्द्रिय आदि जीवन के इन्द्रिय पाइये तिनका निरूपण ओर संक्षी जीव कौन ऐसे कल्पा। बहुरि पर भय को जीव गमन करे ता का गमन का स्वरूप कल्पा। आगे जन्म के भेद योनि के भेद और गर्भंग कैसे उपजै और देव नार की सन्मुर्छन कैसे उपजै ता का निर्णय है। आगे पाँच शरीरन का नाम कल्पा और तिन के सूलि का स्वरूप कहा। अरु ये जिनके जैसे उपजै तिनका निरुपण किया। आगे वेद जिनके जैसा होय ताको कहिकर जिनके उदय उदीरणा कर करण होय तिनका नियम करि अध्याय पूर्ण किया।

।। तृतीय अध्याय सूत्र का अर्थ।।

तीसरा अध्याय में जीव का रहने का लोक है। तामें अधोलोक मध्यलोक का विवरण है। तामें अधोलोक के मान पृथ्वी का नाम कहे। तिन तिन विषे नारकी जीव उपजे हैं। तिनके मिलन का प्रमाण कहा। बहुरि जीवनी का अशुभ परिणाम आदि कहकर तिनके परस्पर अर अशुरन कर किया दु:ख ताकू कहि तिनकी आयु का प्रमाण कहा। आगे मध्यलोक विषै जम्बूद्वीप आदि द्वीप लवण समुद्र आदि समुद्र हैं। तिनका व्यास आकार कहा। बहुरि जम्बूद्वीप का स्वरूप कहि ताके मध्य क्षेत्र हैं कुलाचल पर्वत है तिनका नाम और वर्ण आकार कहा। बहुरि कुलाचल तिउपर द्रह है तिनके नाम व्यासादि बहुरि तिन में कमल है तिनका व्यासादिक बहुरि तिन में देवी बसे हैं तिनके नाम परिवार आयु कही। आगे द्रहिन में सू नदी गंगादिक निकली है तिनके नाम परिवार गमन कसा बहुरि भरत होत्र का विस्तार कहि अन्य का विस्तार कहि अन्य का विस्तार जनाया बहुरि भरत ऐरावत क्षेत्र में काल घटे बढे अन्य में अवस्थित है

ऐसे कहिकर भोगभूमि के जीवनी की स्थिति कही। बहुरि भरतादि क्षेत्र धान की खण्ड पुष्कर द्वीप में है सो कहे। मनुष्य क्षेत्र की मर्यादा कहीं कर्म भूमि के क्षेत्र कहे मनुष्य निर्यव आयु का प्रमाण आदि कहि अध्याय पूर्ण किया।

।। चतुर्थ अध्याय सूत्र का अर्थ।।

चौथे अध्याय में अर्धलोक का वर्णन किया है तामें चार प्रकार के देव कहे तिन के लेश्या कही और इन्द्र आदि दस भेद कहे और इन्द्रों की संख्या और उनके काम सेवन की विधि कही। बहुरि भवतवासिन के भेद व्यतरन के भेद ज्योतिषीन के भेद कहे। बहुरि ज्योतिषीन का गमन का प्रकार अनु मनुष्य क्षेत्र विषेइनकर काल का विभाग है। मनुष्य क्षेत्र तै परे अविस्थिति ऐसे कहा। आरो विमान वासीदेव तिन विषे कल्प कल्यातीत का भेद बहुरि स्वर्ग निका नाम और तिनके आयु आदि वधते वधते अरु गमन आदि घटने ऊपर उपरी हैं। सो कहे तिनकी लेस्या कहि ग्रीवक पहिली कल्प कहे। बहुरि पाँचवाँ स्वर्ग में लौकान्तिक हैं तिनके जाति भेद कहे। बहुरि औदायादिक मनुष्य सिवाय रहे तै जीव सर्व तिर्पच हैं ऐसे कहा। आगे तिन देवन की आयु का निरूपण में भवन वामिनि की उत्कृष्टि कही। अर उत्कृष्ट व्यंतर ज्योतिषीति की कही। ऐसे चौथा अध्याय पूरा हुआ।

।। पंचम अध्याय सूत्र का अर्थ।।

पंचमी अध्याय में अजीव तत्त्व का प्रबन्ध करि निरुपण है तहाँ धर्म आदि च्यारि अजिवास्ति काय कही। अर जीवास्ति काय कहा। तिन पांचनि कू द्रव्य कहे तिनमें च्यार—अरुपी पुद्गल रूही अरु आकाश तांई तीन एक एक द्रव्य क्रिया रहित कहे। धर्म अधर्म एकजीव के असंख्यान प्रदेश कहे। आकाश के अनन्त कहे। पुद्गल के स्कंध अपेक्ष तीनों प्रकार कहे। अणु के प्रदेश नांहि, अरु आकाश का उपकार, अवगाह, गति, स्थिति, धर्म, अधर्म का उपकार शरीरादिक जीवकूँ पुद्गल के उपकार जीवनी के परस्पर कालद्रव्य का बर्नना उपकार कल्पा। बहुरि पुद्गल के स्पर्श आदि गुण शब्द आदि पर्याय कहे अणु स्कंध भेद कहे। बहुरि द्रव्य का सन् सामान्य लक्षण कल्पा। बहुरि मुख्य गौण करिनय का लगावणा कल्पा बहुरि कल्पा। बहुरि काल द्रव्य कल्पा। बहुरि गुण पथयि का स्वरूप कहि पंचम अध्याय पूरा किया।

।। षष्टम अध्याय सूत्र का अर्थ।।

छटा अध्याय में आश्रवतत्व का सामान्य निरूपण है बहुरि पुण्य पाप दो भेद कहे। तहाँ कषाय संयुक्तै के सांपरायक आश्रकहोय। अकषायी के इर्यापथ आश्रव होय। तहाँ सांपरायक कैयिन्द्री आदि भेद कहे। तिनके तीव्र मन्दांदिक भावनकरि विशेष कल्पा। बहुरि आश्रव का अधिकारण जीव अजीव द्रव्य को कहिकर जीवाधि करण के सम्भरंभादिक एक सौव आठ भेद तथा इनके विशेषतैं अनेक भेद होना कल्पा। बहुरि अजीवाधिकरण के निर्वितनादि अनेक भेद कहे आगे अनुभाग के तीव्र मन्द बन्ध होने अपेक्षा न्यारे आठ कर्म तिनके आश्रव होने के कारण कह के अध्याय पूर्ण किया।

।। सप्तम अध्याय सूत्र का अर्थ।।

सतमा अध्याय में पुण्यआश्रम का निरूपण है। तहांहिसादि पाँच पाप का त्यागते व्रत होय है। ऐसा कहि तिनके एक एक देश सर्व दु:ख तैं (१) अणुव्रत है ऐसा कहा। तिन व्रतन के हट करने को पंच भावना कही। बहुरि पाँच पाप इस लोक परलोक में दुखदाई तथा दु:ख कहे। तिनकी भावना राखणी। बहुरि मैत्री आदि च्यारि भावना कही। संसार देह स्वभाव की भावना कही आगे पाँच पाप का लक्षण जुदा जुदा कहा। व्रती नि:सत्य होय मुनिअरु ग्रहस्थ्य होय तहाँ ग्रहस्थ्य के अणुव्रत दिगव्रत आति मात शील कहे अन्त संलेखना कही सब का अतीचार न्यारा न्यारा कह अध्याय पूर्ण किया।

।। अष्टम अध्याय सूत्र का अर्थ।।

आठमा अध्याय में वंधतत्व का निरुपण है। तहाँ मिथ्यात्वादि वंध के कारण कहिकर वंध का स्वरूप कल्पा आगे तिसके चार भेद कहे। तिसमें पहिला प्रकृति वंध तिसकी मूल प्रकृति आठ और उत्तर प्रकृति १४८ तिनके न्यारे न्यारे नाम कहे आगे उत्कृष्ट जघन आठ कर्मनि की स्थिति न्यारी न्यारी कही। बहुरि अनुभाग वंध का स्वरूप कहा बहुरि प्रदेश वंध का स्वरूप कहा। आगे पुण्य पाप प्रकृति के भेद कह अध्याय पूण्र किया।

।। नवम अध्याय सूत्र का अर्थ।।

नवमा अध्याय में संवरतत्त्व का निरूपण है तहाँ आश्रव के निरोध को संवर कल्पा है। सो संवर गप्ति आदि कारण करि होय है। ऐसे कहि गुप्ती का स्वरूप सविकी का स्वरूप भेद धर्म के भेद अनुप्रेक्षा के भेद परिषत का विशेष करि भेदनिका कथन अर चारित्र के भेदन का निरूपण किया आगे तप करि निर्जरा कही। तिस तप के बारह भेद के उत्तर भेद बहुरि ध्यान तप के चार भेद आर्त रौद्र और धर्म शुक्ल तिनके भेदनिका विशेष निरूपण किया। आगे सम्यग्दृष्टि आदि ६ प्रस्थान असंख्यातगुणी निज से कहि पुलाक आदि पंच प्रकार मुनीन का निरूपण कर अध्याय पूर्ण किया।

।। दसम अध्याय सूत्र का अर्थ।।

दसमा अध्याय में मोक्ष तत्त्व का निरूपण है तहाँ केवल ज्ञान की उत्पत्ति का विधान कहि तिस पूर्वक मोक्ष का स्वरूप कहा। सो द्रव्ये भावरूप सर्व कर्म का अभाव करि मोक्ष होय तब जीव का उर्द्ध गमन स्वभाव है सो उर्द्ध गमन करि लोक के अन्तजाय तिष्टै ताके हेतु द्रष्टान्त कथंचित अपेक्षा सिद्धन में भेद कहने का सूत्र कहि दसमा अध्याय पूर्ण किया।।

इति दसाध्याय सूत्र जी का संक्षिप्त अर्थ पूर्ण हुआ।

।। गणेशप्रशाद जी वर्णी ने अपने मित्र का सम्बोधनार्थ पत्र भेजकर समाधि मरण कराया तिनकी नकल

।। पत्र नम्बर १ ।।

।। योग्य शिष्टाचार!

सत्यदान तो लोभ का त्याग है। और उसको मैं चारित्र का अंश मानता हूँ। मूर्छा की निवृत्ति ही चारित्र है। हमको द्रव्य त्याग में पुण्य वंध की ओर दृष्टि न देना चाहिए; किन्तु इस द्रव्य से ममत्व निवृत्ति द्वारा शुद्धोपयोग का वर्धक दान समझना चाहिए। वास्तविक तत्त्व ही निवृत्ति रूप है। जहाँ उभय पदार्थ का वंध है वही संसार है। और जहाँ दोनों वस्तु स्वकीय २ गुणपर्यायों में परिणमन करते हैं वही निवृत्ति है यही सिद्धान्त है। कहा भी है।

सिद्धान्तोऽयमुदास चित करितै मोक्षार्थि मी:सेव्यतां
शुद्धं चिन्मयमे कमेव परम ज्योतिस्म देवा सभ्यहम।।
एतै मेतु समुल्यसंति विवधा भावा: प्रथग्लक्षणा।।
स्तैऽहं नास्मि यतोऽत्रते ममपर द्रव्य ममया अपि।।

अर्थ यह सिद्धान्त उदारचित और उदार चरित्र वाले मोक्षार्थियों को सेवन करना चाहिए कि मैं एक ही शुद्ध (कर्म रहित) चैतन स्वरूप परम ज्योति वाला सदैव हूँ। तथा ये मेरे भिन्न लक्षण वाले नाना भाव प्रगट होते हैं वे मेरे नहीं हैं क्योंकि वे सम्पूर्ण मेरे भाव पर द्रव्य हैं।

इस श्लोक का भाव इतना सुन्दर और स्वीकार है जो हृदय में आते ही संसार का आताप कहाँ जाता है पता नहीं लगता आप जहाँ तक हो अब इस समय शरीरिक अवस्था की ओर दृष्टि न देकर निजात्मा की ओर दर्शनात्मक जो आत्मा है वही उपादेय है शेष जो बाह्य पदार्थ हैं वे मेरे नहीं हैं।

मरण क्या वस्तु है? आयु के निषेक पूर्ण होने पर मनुष्य पर्याय का वियोग तथा आय के सद्भाव में पर्याय का सो ही जीवन। अब देखिये जैसे जिस मन्दिर में हम निवास करते हैं उसके सद्भाव असद्भाव में हमको किसी प्रकार का हानि लाभ नहीं, तब क्यों हर्ष विषाद कर अपने पवित्र भावों को कलुषित किया जावे। जैसे कि कहा है।

श्लोक

प्राणोछेद मुदा हरन्ति मरणं प्राणा: किलास्यात्मनो
ज्ञानं स्त्स्वयमेव शाश्वत तया नोच्छिद्यतै जातु चित।।

लक्ष देकर उसी के स्वास्थ्य की औसधि का प्रयत्न करना। शरीर पर द्रव्य है उसकी कोई भी अवस्था हो उसका ज्ञाता दृष्टा हो रहता तो समयसार में कहा है।

—गाथ—

।। को णाम भणिज वुहो परद्रव्यं मम इम हवदि दव्वं।।

अप्पाणमप्पणे परिगहंतुणियदं वियाणंते

भावार्थ– यह पर द्रव्य मेरा है ऐसा ज्ञानी पण्डित नहीं कह सकता। क्योंकि ज्ञानी जीव को आत्मा को ही स्वकीय परिग्रह मानता या समझता है।

यद्यपि विजातीय दो द्रव्यों में मनुष्य पर्याय की उत्पत्ति हुई है; किन्तु विजातीय दो द्रव्य मिलकर सुधा हरिद्रावत एक रूप नहीं परण में है। वहाँ तो वर्ण गुण दोनों का एक रूप परिणमना करई आपत्ति जनक नहीं है; किन्तु यहाँ पर एक चेतन और अन्य अर्चतन द्रव्य हैं इनका एक रूप परिणमना न्याय प्रतिकूल है। पुद्गल के निमित को प्राप्त होकर आत्मा रागादि रूप परिणमना जाता है। फिर भी रागादि भाव औदायक है अत: वध जनक है आत्मा दु:ख जनक है अत: हेय है परन्तु शरीर का परिणमन आत्मा से भिन्न है। अत: न वह स्य है और न वह उपादेय है। इसी को समय मार में श्री महर्षि कुन्द कुन्द स्वामी ने निर्जराधिकार में लिखा है।

—गाथा—

छिज्जा दुवा भिज्ज दुवा अहव जादु विप्पलय।
जम्हा तम्हा गच्छदु तहवि णहुपरिग हो मज्झ।।

अर्थ– यह शरीर छीद जावो अथवा भिद जाओ अथवा निर्जरा को प्राप्त हो जावो अथवा नाश हो जावो जैसे तैसे हो जावो तौ भी यह मेरा परिग्रह नहीं है।

इसी से सम्यग्दृष्टि के परद्रव्य के नाना प्रकार परिणमन होते हुवे भी हर्ष विषाद नहीं होता अत: आपको भी इस समय शरीर की क्षीण अवस्था होते हुवे कोई भी विक्लपन कर तटस्थ रहना हितकर है।

चरणानुयोग में जी पर द्रव्यों को शुभाशुभ में निमितत्त्व की अपेक्षा हेयोपादेय की व्यवस्था की है वह अल्प प्रज्ञ के अर्थ हैं आपतो विज्ञ हैं। अध्यवसाम कोई बन्ध का जनक समझ उसी के त्याग की भावना करना और निरन्तर में सास दो आदा णाण दसण लक्खणो अर्थात् ज्ञान

अम्यातो मरणन किंचिदु भवेत्तद्भी: कुतो ज्ञानिनो
नि:शंक: सततं स्वयं स सहजं ज्ञानं सदा विन्दति।।

अर्थ— प्राणो के नाश को मरण कहते हैं। और प्राण इस आत्मा का ज्ञान है। वह ज्ञान सतरूप स्वही नित्य होने के कारण कभी नहीं नष्ट होता है। अत: इस आत्मा का कुछ भी मरण नहीं है तो फिर ज्ञानी को मरण का भय कहाँ से हो सकता है। वह ज्ञानी स्वयं नि:शंक होकर निरन्तर स्वाभाविक ज्ञान को सदा प्राप्त करता है।

इसप्रकार आप सानन्द ऐसा मरण का प्रयास करना जो परम्परा मातास्तन पान से बच जावे। इतना सुन्दर अवसर हस्तगत हुवा है, अवश्य इससे लाभ लेना।

आत्मा ही कल्याण का मन्दिर है अत: पर पदार्थों की चित मात्र भी अपेक्षा न करें। अब पुस्तक द्वारा ज्ञानाभ्यास करने की आवश्यकता नहीं। अब तो पर्याय में घोर परिश्रम कर स्वरूप के अर्थ मोक्ष मार्ग का अभ्यास करना है। अब उसी ज्ञान शास्त्र को रोग द्वेष शत्रुओं के ऊपर निपात करने की आवश्यकता है। यह कार्य न तो उपदेष्टा का है और न समाधि मरण में सहायक पण्डितों का है। अब तो अन्य कथाओं के श्रवण करने में समय को न देकर उस शत्रु सेना को पराजय करने में सावधान होकर यत्न पर हो जावो।

यद्यपि अनियिमित तर्क द्वारा बहुत सी आपत्ति इस विषय में ला सकते हैं। फिर भी कार्य करना अन्त में तो आप ही का कर्तव्य होगा। अत: जब तक आपकी चेतना सावधान है, निरन्तर स्वात्म चिन्तवन में लगावो।

अन्त में

श्री भगवान् पंच परमेष्टी का स्मरण करो किन्तु ज्ञायक की ओर ही लक्ष रखना क्योंकि मैं ज्ञाता दृष्टा हूँ क्षेय भिन्न है, उसमें इष्टाअनिष्ट विकल्प न हो यही पुरुषार्थ करना और अतरंग में मूर्छा न करना तथा रागादिक भावों को तथा उसके वक्ताओं को दूर ही से त्यागना। मुझे आनन्द इस बात का है कि आप नि: सल्य है। यही आपके कल्याण की परमौषधि है।

इति

इसके सिवाय और भी कई पत्र वर्णी जी ने भेजे हैं उनकी नकल सीनाभाव से नहीं लिखी गई जिस किसी को देखना हो समाधि मरण पत्र पुंज एक पुस्तक पं. कस्तूरचन्द जी जब्वलपुर वाले ने छपवाई है उनसे मालुम करेंगे।

अठाई रासा लिख्यते

बरत अठाई जे करें ते पावें भवपार।
प्राणी ऊँ नम: सिद्धेभ्यो प्रथम तीन बार उच्चार।।
बरत अठाई विध कहूँ जिनागम अनुसार।। प्र. १।।
कातिक फागुन साढ़ के अन्त आठ दिन मांहु।
तीन बार इक वर्ष में व्रत कर सब अध जायँ।। प्र. २।।
याकी विधि संक्षेप अब सुनो सबै नर नार।
शुक्ल सप्तमी के दिना भोजन कर इक बार।। प्र. ३।।
प्रोषध सोलह पहर को नेम लेय मन लाय।
नौमी के दिन असन ले एक बार सुख दाय।। प्र. ४।।

दसमी ज्ञारस द्वादशी और त्रियोदशी जान।
एक बार ही असन ले अन्तिम बेला ठान।। प्र. ५।।
फिर एकम दिन के विषे एक बार आहार।
पात्रादिक को असन दे भोजन कर एक बार।। प्र. ६।।
तथा आदि और अन्त में पोसाधर सुखकार।
बीच इकासन ही करें दूजी विध यह सार।। प्र. ७।।
दस दिन विषयकषाय और आरम्भ तज मनलाय।
सिद्ध चक्र पूजा करो शुद्ध बसु द्रव्य चढ़ाय।। प्र. ८।।
शील सहित यह बिधकरे और शक्ति अनुसार।
शुद्ध भावों से जे करे तै उतरे भवपार।। प्र. ९।।
कोटीभट श्रीपाल की देह गली अध योग।
और सात से सुभट भी कोढी भए निरोग।। प्र. १०।।
रानी मैना सुन्दरी कीनो व्रत सुखदाय।
गन्धोदक के छिड़कतै कञ्चन काय लहाय।। प्र. ११।।
याही बिध नर नार जे अष्टान्हिक व्रतधार।
मन बच काया जे करें ते पावें शिवसार।। प्र. १२।।
इनहिं अठाई पर्व में अष्टम दीप मँझार।
देव चतुर्विध सर्व मिल जाएँ भक्ति उरधार।। प्र. १३।।
बसुबिध द्रव्य सँजोय के चौंसठ चौ पहर सुजान।
बावन जिन मन्दिरन बसु विध पूजाठान।। प्र. १४।।
अब नन्दीश्वर दीप की रचना सुनिये सार।
बावन जिन मन्दिरन की महिमा अगम अपार।। प्र. १५।।
एकसो त्रेसठ कोड़ लाख चौरासी जान।
जोजन चौड़ा दीप है इक इक दिश परवान।। प्र. १६।।
तैरह तैरह जिन भव चारों दिश में जान।
गोल ढोल सम तै कहे बावन सर्व बखान।। प्र. १७।।
पूरब दिश का कथन अब सुनो सर्व नर नार।
तेरह जिन मन्दिरन की रचना तीन प्रकार।। प्र. १८।।
अँजन गिर दधि मुख तथा रतकर गिरये नाम।
एक चार और आठ सब तेरह जिनपर धाम।। प्र. १९।।
अँजन चौरासी सहस अँजन गिरजु उतँग।
नीचे सर्व रतन मई ऊपर श्याम अमँग।। प्र. २०।।
लाख लाख जोजन तनी ताको चारों ओर।
चार वापिका जलभरी शीतल उठें हिलोर।। प्र. २१।।
चारों वापिन बीच में दधि मुख एक एक जान।
ऊँचे जोजन दस सहस सर्व रतन मय जान।। प्र. २२।।
चोटी जिनकी श्वेत है दधि सम दधि मुख जान।

चार जिनालय हैं तहाँ शोभा अति अभिराम।। प्र. २३।।
तिन वापिन के कोण में रतकर गिरबसु जान।
नीचे सर्व रतन मई ऊपर लाल बखान।। प्र. २४।।
सब तेरह इन ऊपरे जिनवर भवन रिसाल।
तेरह महा मनोज्ञ हैं अति उतँग सु विशाल ।। प्र. २५।।
जो रचना पूरब विषै सोई दक्षिण जान।
सो पश्चिम उत्तर विषै भाषी श्री भगवान्।। प्र. २६।।
एक एक मन्दिर बिषै प्रतिमा एक सो आठ।
ऊँची धनुष जु पाँच से पदमाशन शुभठार।। प्र. २७।।
नयन श्याम और श्वेत हैं लाल अधर नख जान।
श्याम भौह और केश हैं मानो बचन बखान।। प्र. २८।।
कोटि सूर्य की दुति छिपे छवि महा वैराग।
देखे सम्यक होत हैं मिटे जगत अनुराग।। प्र. २९।।
धन्यभाग देवन तने जो तहाँ पूजन जाय।
दो दो पहर चहुँदिशा पूजत हर्ष बढाय।। प्र. ३०।।
ढाई दीपन लँघई मानुष जेती जात।
ऋषि मुनिहु नहिं जा सके औरन की क्या बात।। प्र. ३१।।
बावन जिन मन्दिरन की पर्व अठाई मांय।
पूजा कीजे भाव सों बढे पुन्य अध जांय।। प्र. ३२।।
इन्द्रध्वज पूजा यह कही जिनागम मांय।
महिमा ताकी कहन को कोई समरथ नांय।। प्र. ३३।।
श्री अष्टान्हिक व्रत को धारे जो नर नारि।
कृश्न बाल पक्षिक कहै ते उतरे भव पार।। प्र. ३४।।
अठाई रासाजी समाप्तम्

।। मेरी प्रार्थना।।

श्री जिनवर महाराज जगत पति सब जीवों की पूरो आस।
ज्ञान भानु का उदय करो अब मिथ्यातम को होय विनाश।।
जीवों की मैं करुणा पालूँ झूठ बचन नहीं कहूँ कदा।
चोरी कबहूँ न करहूँ स्वामी ब्रह्मचर्य व्रत रखूँ सदा।।१।।
तृष्णा लोभ बढे नहीं मेरे तोष सुधा नित पिया करूँ।
साँचे देव गुरू की सेवा भक्तिभाव नित हृदय धरूँ।।
सप्त व्यसन मैं कबहूँन सेऊं बाईस अक्षर दूर तजूं।
दर्शन पूजा करुँ निरन्तर भक्तिभाव नित हृदय सजूँ।।२।।
कुगरु कुदेव कुधर्म तजूँ और जैन धर्म का करूँ प्रचार।
दूर भगाऊँ बुरी रीतियाँ खान पान का शुद्धाचार।।
सोलह कारण और दश लक्षण रत्नत्रय नित हृदय धरूँ।

तीनों पर्व अठाइ पूजा भक्तिभाव से किया करूँ।।३।।
आपस में नित प्रीत बढ़ाऊँ बैर विरोध न करूँ कदा।
तज प्रमाद नित आतम ध्याऊँ शास्त्रा भ्यास करूँ जु सदा।।
यही प्रार्थना है प्रभु मेरी बीतरागता बुद्धि करो।
क्रोध मान माया लोभादिक आठ कर्म दुख दूर करो।।४।।
धर्म ध्यान में रह चित मेरा पापविषै मन जाय नहीं।
भव भव भक्ति मिले प्रभु तेरी जबलग पाऊँ मुक्ति सही।।
बीतराग सर्वज्ञ हितं कर अरजी हमरी चित धरना।
सर्व देश में सुभिक्ष कीजे घर घर सुख मंगल करना।।५।।
राजा प्रजा बसो सुख सेती घना कहा अरदास करुँ।
मनसा पूर्ण कर प्रभू मेरी बार बार मैं नमन करुँ।
जो अपराध हुआ प्रभू मेरा सो सब कीजे माफ सही।
कृश्न बाल चरनन का चेरा आन तुम्हारी शरण लही।।६।।

समाप्तम्